अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र

सर्वोदय जगत

वर्ष-42, अंक-24, 1-15 अगस्त 2019

अगस्त क्रांति दिवस विशेषांक

करो या मरो

हर व्यक्ति को इस बात की खुली छूट है कि वह अहिंसा पर आचरण करते हुए अपना पूरा जोर लगाये। हड़तालों और दूसरे अहिंसक तरीकों से पूरा गतिरोध (पैदा कर दीजिए)। सत्याग्रहियों को मरने के लिए, न कि जीवित रहने के लिए, घरों से निकलना होगा। उन्हें मौत की तलाश में फिरना चाहिए। और मौत का सामना करना चाहिए। जब लोग मरने के लिए घर से निकलेंगे तभी कौम बचेगी। करेंगे या मरेंगे। स्वतंत्रता के हर अहिंसावादी सिपाही को चाहिए कि वह कागज या कपड़े के एक टुकड़े पर 'करो या मरो' का नारा लिखकर उसे अपने पहनावे पर चिपका ले, ताकि सत्याग्रह करते-करते मारा जाय तो उसे उस निशान के द्वारा दूसरे लोगों से अलग पहचाना जा सके, जो अहिंसा में विश्वास नहीं रखते।

9 अगस्त 1942

-महात्मा गांधी

सर्व सेवा संघ
(अखिल भारत सर्वोदय मंडल)
द्वारा प्रकाशित

अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र
सर्वोदय जगत
सत्य, अहिंसा एवं सर्वोदय-सम्पूर्ण क्रांति का संदेश वाहक

वर्ष : 42, अंक : 24, 1-15 अगस्त 2019

अध्यक्ष
महादेव विद्रोही

संपादक
बिमल कुमार
सहसंपादक
प्रेम प्रकाश
09453219994
संपादक मंडल
डॉ. रामजी सिंह भवानी शंकर 'कुसुम'
प्रो. सोमनाथ रोडे अरविन्द अंजुम,
रमेश ओझा अशोक मोती

संपादकीय कार्यालय
सर्व सेवा संघ
राजघाट, वाराणसी-221001 (उ.प्र.)
फोन : 0542-2440-385/223
ईमेल : sarvodayajagat@gmail.com
Website : sssprakashan.com

शुल्क

एक प्रति	:	05 रुपये
वार्षिक	:	100 रुपये
आजीवन	:	1000 रुपये

खाता संख्या : 383502010004310
IFSC Code : UBIN0538353
Union Bank of India
Rajghat, Varanasi

इस अंक में...

1. संपादकीय... 2
2. स्वतंत्रता को कल नहीं, आज ही आना... 3
3. संवाद-समन्वय के लिए 'करो या मरो'... 4
4. भारत छोड़ो आंदोलन का प्रस्ताव... 5
5. 'मामनुस्मर युद्ध्य च'... 6
6. आजादी के आंदोलन का स्वर्णिम... 7
7. स्वतंत्रता आंदोलन एवं गांधी का नेतृत्व... 9
8. अगस्त क्रांति की चुनौती... 11
9. कितने वीरानों से गुजरे, तब ये जन्नत... 13
10. जब गांधी की भाषा अग्नि में पड़े कुंदन... 14
11. भारत! भारत छोड़ो... 15
12. जब तक एक भी आंख में आंसू है हमारा... 16
13. अध्यक्ष की कलम से... 17
14. लोक-विमर्श... 18
15. गतिविधियां एवं समाचार... 19
16. कविताएं... 20

संपादकीय

अगस्त क्रांति की विरासत

अगस्त क्रांति (1942) का महत्त्व केवल देश की स्वतंत्रता के संघर्ष की एक महत्त्वपूर्ण कड़ी के रूप में ही नहीं देखा जाना चाहिए। यह संघर्ष कहीं अधिक गहरे निहितार्थ समेटे था। एक ओर राष्ट्रवादी शक्तियां थीं, जो भारतीय राष्ट्र-निर्माण के काम में भी जुटीं थीं। दूसरी ओर ब्रिटिश सत्ता भारत की सामाजिक-धार्मिक पहचान तथा प्रांतीयता के आधार पर उसके प्रतिनिधित्व एवं उसकी स्वायत्तता को बढ़ावा दे रही थी। लेकिन उनका उद्देश्य न केवल एक राष्ट्र के निर्माण की संभावना को क्षीण करना था, बल्कि भारत को कई टुकड़ों में बांट देने का भी था। इसी कारण जहां कांग्रेस पार्टी आजादी के साथ-साथ भारत की एकता की लड़ाई भी लड़ रही थी, वहीं कई अन्य दल व समूह, अपने संकीर्ण स्वार्थों के कारण ब्रिटिश सत्ता का साथ दे रहे थे। इन भूमिकाओं के चलते ही द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान सबका असली चेहरा सामने आ गया।

द्वितीय विश्व युद्ध शुरू होने के बाद, ब्रिटेन ने बिना भारत की जनता की सहमति लिये, भारत को इस युद्ध में शामिल कर लिया। कांग्रेस पार्टी ने इसके विरोध में सभी प्रांतीय सरकारों से इस्तीफा दे दिया। मामले को सुलझाने के लिए क्रिप्स कमीशन भारत आया। गांधीजी ने स्वयं को इन वार्ताओं से अलग रखा। गांधी-इरविन पैक्ट का अनुपालन ब्रिटिश राज ने नहीं किया था, इसलिए क्रिप्स के आश्वासन पर भरोसा करना मुश्किल था। कांग्रेस पार्टी चाहती थी कि भारत को तुरंत स्वतंत्रता प्रदान की जाय। तब स्वतंत्र भारत युद्ध में ब्रिटेन का साथ देने का निर्णय लेगा। क्रिप्स का प्रस्ताव युद्ध के बाद सत्ता के हस्तांतरण का था। क्रिप्स के प्रस्तावों में यह भी प्रावधान था कि जो प्रांत भारत से अलग रहना चाहेंगे वे अलग रह सकेंगे। रजवाड़ों के बारे में भी स्पष्टता नहीं थी। कई जातीय एवं धार्मिक समूह के लोग अपना प्रतिनिधित्व कैसे सुनिश्चित करेंगे, इसकी भी स्पष्टता नहीं थी। यानी भारतीय नागरिकता का सवाल उलझनों में डाल दिया गया था। कांग्रेस पार्टी ने इन्हीं कारणों से क्रिप्स के प्रस्तावों को अस्वीकार कर दिया।

ब्रिटिश प्रस्तावों में भारत के कई टुकड़ों में बंट जाने की संभावना के बीज सदैव रहते थे। कई समूह इसी कारण चाहते थे कि ब्रिटिश सत्ता भारत में तब तक बनी रहे जब तक बंटवारे एवं उनके प्रतिनिधित्व का सवाल हल नहीं हो जाता तथा ब्रिटिश शासन द्वारा ही उनका क्रियान्वयन नहीं कर दिया जाता। जबकि गांधी चाहते थे कि ब्रिटिश सत्ता भारत से पहले जाये, बाद में हम मिल बैठकर अपनी समस्याओं को सुलझा लेंगे।

एक और बात थी। जापान द्वारा बर्मा तक की जीत ने भारत में ब्रिटिश कब्जे के बारे में संशय खड़ा कर दिया।

ऐसे में भारत छोड़ो का मंत्र भारतीय राष्ट्र एवं भारतीय चेतना का नैसर्गिक उद्घोष था। इसमें भारत के राष्ट्र निर्माण तथा भारत की एकता के तत्त्व अन्तर्निहित थे। जबकि ब्रिटिश सत्ता एवं उसके समर्थक चाटुकार समूहों के प्रस्तावों में भारत के टुकड़ों में बंट जाने के बीज निहित थे। इन शक्तियों के टकराव का परिणाम ही था कि अंग्रेज भारत का विभाजन करने के बाद ही भारत छोड़कर गये।

ब्रिटिश सत्ता की चाटुकारिता के माध्यम से अपने संकीर्ण हितों के स्वार्थ साधन में जुटे हुए लोग आजादी के बाद के कुछ समय तक कमजोर पड़े रहे। किन्तु समय बीतने के साथ-साथ वे धीरे-धीरे अपना आधार मजबूत करते चले गये। भारत आज फिर एक मोड़ पर है। भारत निर्माण एवं भारतीय चेतना के निर्माण को संकीर्ण जातीय-साम्प्रदायिक पूंजीवादी गठजोड़ से गंभीर चुनौती मिल रही है। जातीय एवं साम्प्रदायिक चेतना प्रमुखता से सर उठा चुकी है। सांस्कृतिक विविधताओं की धाराओं के बीच भारतीय एकता के निर्माण के अभियान को गंभीर चोटें पहुंचायी जा रही हैं।

ऐसे में अहिंसक क्रांति के आंदोलनकारियों को अपनी रणनीति में एकता और सौहार्द के पक्ष को मजबूती से शामिल करना होगा। आंदोलनकारी संघर्षों की अनुपस्थिति में संकीर्ण शक्तियों व विचारधाराओं को आगे बढ़ने का मौका मिल जाता है। राजनीतिक दलों के दायरे के बाहर एक व्यापक एकता का निर्माण कर, अहिंसक संघर्षों को आगे बढ़ाने का काम ही अगस्त क्रांति की विरासत को आगे बढ़ाने का काम होगा। सर्वोदय को इसमें अगुवाई करनी होगी।

–बिमल कुमार

गांधी - 150

स्वतंत्रता को कल नहीं, आज ही आना होगा

(8 अगस्त 1942 को ऑल इंडिया कांग्रेस कमेटी के सामने गांधीजी के संबोधन के महत्त्वपूर्ण अंश)

❑ महात्मा गांधी

मैं सारे संसार के सम्मुख यह घोषणा करना चाहता हूं कि इसके विपरीत लोग चाहे कुछ भी कहें, हालांकि मैं पश्चिम में अपने बहुत-से मित्रों का आदर-भाव और विश्वास खो बैठा हूं तथा इसका मुझे खेद है, लेकिन उनकी मित्रता या प्रेम की खातिर भी मुझे अपने हृदय की आवाज को, जिसे आप चाहें तो 'मेरी आंतरिक मूल प्रकृति की प्रेरणा' कह सकते हैं, दबाना नहीं चाहिए। मेरे भीतर कोई चीज है जो मुझे अपनी व्यथा को वाणी देने के लिए बाध्य कर रही है। मैंने मानव-स्वभाव को जाना है। मैंने थोड़ा-बहुत मनोविज्ञान का भी अध्ययन किया है, हालांकि इस पर मैंने ज्यादा पुस्तकें पढ़ी नहीं है लेकिन फिर भी ऐसा व्यक्ति अच्छी तरह से जानता है कि वह चीज क्या है। मेरे भीतर की वह आवाज, जो मुझे कभी धोखा नहीं देती, अब मुझसे कह रही है कि तुम्हें सारे संसार के विरुद्ध खड़े होना है, भले ही तुम्हारा साथ कोई न दे और तुम अकेले ही रह जाओ। तुम्हें संसार के आमने-सामने खड़े होना है भले ही संसार तुम्हें खूनी आंखों से देखे। डरो नहीं। उस छोटी-सी चीज पर विश्वास करो जो तुम्हारे हृदय में बसती है। वह कहती है कि मित्रों को, पत्नी को, और सबको त्याग दो; लेकिन जिसके लिए तुम जीते रहे हो और जिसके लिए तुम्हें मरना है, वह सिद्ध करके दिखा दो।

दोस्तों, मेरा विश्वास करो, मैं मरने के लिए कतई उत्सुक नहीं हूं। मैं अपनी पूरी आयु जीना चाहता हूं। मेरे विचारानुसार वह आयु कम-से-कम 120 वर्ष है। उस समय तक भारत स्वतंत्र हो जायेगा, संसार स्वतंत्र हो जायेगा। मैं आपको यह भी बता दूं कि मैं इंग्लैंड को अथवा इस दृष्टि से अमेरिका को भी स्वतंत्र देश नहीं मानता। ये अपने ढंग से स्वतंत्र देश है, पृथ्वी की अश्वेत जातियों को दासता के पाश में बांधे रखने के लिए स्वतंत्र हैं। क्या इंग्लैंड और अमेरिका आज इन जातियों की स्वतंत्रता के लिए लड़ रहे हैं? आप स्वतंत्रता की मेरी परिकल्पना को सीमित न करें। अंग्रेज और अमेरिकी शिक्षकों ने, उनके इतिहास ने, उनके शानदार काव्य ने यह नहीं कहा है कि आप स्वतंत्रता की व्याख्या का विस्तार न करें। मुझे विवश होकर कहना पड़ रहा है कि स्वतंत्रता की मेरी व्याख्या के अनुसार, उनके कवियों और शिक्षकों ने जिस स्वतंत्रता का वर्णन किया है, उससे वे सर्वथा अपरिचित हैं। यदि वे सच्ची स्वतंत्रता को जानना चाहते हैं तो उन्हें भारत आना चाहिए। उन्हें यहां अभिमान और अहंकार भाव से नहीं बल्कि सच्चे सत्यान्वेषी की भावना से आना होगा।

यह वह मूलभूत सत्य है जिसका पिछले 22 वर्षों से भारत प्रयोग कर रहा है। बहुत पहले, अपने स्थापना काल से ही कांग्रेस अनजाने ही उस चीज का त्याग करके चलती रही है जिसे संवैधानिक तरीका कहा जाता है, हालांकि ऐसा करते हुए भी वह अहिंसा पर कायम रही है। दादा भाई और फीरोजशाह संवैधानिक तरीके पर आरूढ़ रहे। वे कांग्रेस के प्रेमी थे। वे इसके मालिक थे। लेकिन सबसे पहले वे सच्चे सेवक थे। उन्होंने हत्या, गोपनीयता और ऐसी अन्य बातों का कभी समर्थन नहीं किया। मैं यह स्वीकार करता हूं कि हम कांग्रेसियों में कई खराब लोग हैं। लेकिन बड़े-से-बड़े पैमाने पर अहिंसात्मक संघर्ष छेड़ने के लिए मैं सारे भारत पर भरोसा करता हूं। मानव स्वभाव की नैसर्गिक अच्छाई पर मुझे भरोसा है, जो सत्य को जान लेता है और संकट के समय मानो अन्तःप्रेरणा से काम करता है। लेकिन यदि अपने इस विश्वास में मैं ठगा जाता हूं तो भी मैं विचलित नहीं होऊंगा। अपने स्थापना काल से ही कांग्रेस ने अपनी नीति का आधार शांतिपूर्ण तरीकों को बनाया तथा बाद में आने वाली पीढ़ियों ने उसमें असहयोग और जोड़ दिया। जब दादाभाई ने ब्रिटिश संसद में प्रवेश किया तो सेलिसबरी ने उन्हें काले आदमी का खिताब दिया था। लेकिन अंग्रेज जनता ने सेलिसबरी को हरा दिया और दादाभाई उसी के मतों से संसद में पहुंचे। भारत तब हर्ष से पागल हो उठा था। तथापि इन सब बातों को भारत अब पीछे छोड़ आया है।

मैं चाहता हूं कि अंग्रेज, यूरोपीय और सभी मित्र-राष्ट्र इन सब बातों को ध्यान में रखते हुए अपने दिलों से पूछें कि आज भारत ने अपनी स्वतंत्रता की जो मांग की है उसमें उसने क्या अपराध किया है। मैं पूछता हूं कि क्या आपका हम पर अविश्वास करना उचित है? क्या यह उचित है कि जिस संस्था की ऐसी पृष्ठभूमि है, आधी सदी से अधिक काल की ऐसी परंपरा और ऐसा इतिहास है, उस पर अविश्वास किया जाये और अपनी पूरी शक्ति लगाकर आप संसार के समक्ष उसकी गलत तस्वीर पेश करें? मैं पूछता हूं कि क्या यह उचित है कि आप येन-केन प्रकारेण, विदेशी समाचार पत्रों की सहायता से, अमेरिका के राष्ट्रपति की मदद से अथवा चीन के जनरलिसिमो की मदद से, जिन्हें स्वयं अभी सफलता प्राप्त करनी है, भारत की नीति विकृत रूप में पेश करें? वैसे मैं आशा करता हूं कि इसमें अमेरिकी राष्ट्रपति और जनरलिसिमो की मदद की बात सच नहीं होगी।

मैं जनरलिसिमो से मिला हूं। मैंने उन्हें श्रीमती च्यांग के माध्यम से जाना है, जो मेरी दुभाषिया थीं। हालांकि वे मुझे दुर्जेय जान पड़े लेकिन श्रीमती च्यांग मुझे ऐसी नहीं लगीं। उन्होंने मुझे श्रीमती च्यांग के माध्यम से इस बात का अवसर दिया कि मैं उनके हृदयगत भावों को जान सकूं। उन्होंने अभी तक यह नहीं कहा है कि हम जो स्वतंत्रता की मांग करते हैं, वह गलत है। आज संसार भर में हमारे विरुद्ध असम्मति तथा विरोध का राग अलापा जा रहा है। उनका कहना है कि हम भूल कर रहे हैं, हमारा कदम समय के अनुरूप नहीं है। मेरे मन में अंग्रेजों के लिए बहुत आदर भाव था, लेकिन अब ब्रिटिश राजनीति से मुझे अरुचि होती है। तथापि और लोग अपना सबक सीख रहे हैं। इन साधनों द्वारा वे कुछ समय के लिए संसार के लोकमत को अपनी ओर कर सकते हैं। लेकिन भारत सभी प्रकार के संगठित प्रचार के विरुद्ध अपनी आवाज उठायेगा। मैं इसके विरुद्ध बोलूंगा। यदि सारा संसार मेरा त्याग कर देता है तब भी मैं कहूंगा कि 'आप लोग गलत हैं। भारत अनिच्छुक हाथों से अहिंसा के रास्ते अपनी स्वाधीनता छीनकर रहेगा।

यदि मेरी आंखें बंद हो जाती हैं और भारत को स्वाधीनता नहीं मिलती, तब भी अहिंसा का अंत नहीं होगा। यदि वे अहिंसक भारत की, जो आज उनके सामने घुटने टेककर बहुत पुराना ऋण चुका देने का अनुरोध कर रहा है, स्वाधीनता की मांग का विरोध करते हैं तो ऐसा करके वे चीन और रूस पर घातक प्रहार करेंगे। क्या कभी लेनदार इस तरह देनदार के पास जाता है? और जब भारत को ऐसे रोष-भरे विरोध का सामना करना पड़ता है, तब भी वह कहता है कि हम ओछा वार नहीं करेंगे। हमने पर्याप्त भलमनसाहस सीख ली है। हम अहिंसा से प्रतिबद्ध हैं। कांग्रेस ब्रिटिश सरकार को परेशान नहीं करेगी, इस नीति का प्रणेता मैं ही हूं। इसके बावजूद, आज आप मुझे इतनी कड़ी भाषा का प्रयोग करते देखते हैं। लेकिन परेशान न करने की मेरी दलील के साथ हमेशा यह शर्त जुड़ी रहती थी कि वह हमारी प्रतिष्ठा और सुरक्षा के अनुरूप हो। यदि कोई व्यक्ति मुझे गले से पकड़कर डुबो देना चाहे तो क्या मुझे अपने को उससे छुड़ाने की

कोशिश नहीं करनी चाहिए? हमारी आज की स्थिति में कोई असंगति नहीं है।

आज यहां विदेशी समाचार पत्रों के प्रतिनिधि इकट्ठे हुए हैं। इनकी मार्फत मैं संसार से कहना चाहता हूं कि मित्र राष्ट्रों के सामने, जो कहते हैं कि उन्हें भारत की जरूरत है, आज यह सुअवसर है कि वे भारत को स्वतंत्र घोषित कर दें और इस तरह अपनी सदाशयता सिद्ध करें। यदि वे ऐसा नहीं करते तो वे अपने जीवन में मिले इस सुअवसर को खो देंगे और इतिहास के पृष्ठों में यह बात सदा के लिए अंकित हो जायेगी कि उन्होंने समय पर भारत के प्रति अपने दायित्व का पालन नहीं किया और लड़ाई हार गये। मैं समस्त संसार की शुभाकामनाएं चाहता हूं, जिससे कि उनके साथ अपने प्रयास से मैं सफलता हासिल कर सकूं। मैं नहीं चाहता कि मित्र राष्ट्र अपनी स्पष्ट मर्यादाओं से बाहर जायें। मैं नहीं चाहता कि वे अहिंसा को स्वीकार करके अभी निरस्त्र हो जायें। फासीवाद में और आज मैं जिस साम्राज्यवाद के विरुद्ध लड़ रहा हूं, उसमें मौलिक अंतर है। अंग्रेज भारत से जो चाहते हैं क्या वह सब उन्हें मिल जाता है? आज तो उन्हें वही मिलता है जो वे उससे जबरदस्ती वसूल करते हैं। जरा सोचिए कि अगर भारत एक स्वतंत्र मित्र राष्ट्र के रूप में अपना सहयोग देगा तो उससे कितना अंतर हो जायेगा। उस स्वतंत्रता को यदि आना है तो आज ही आना चाहिए। यदि आज आप लोग, जिनके पास मदद करने की ताकत है, अपनी उस ताकत का प्रयोग नहीं करते तो उस स्वतंत्रता का कोई आनंद नहीं रह जायेगा। यदि आप उस ताकत का प्रयोग कर सकें तो आज जो असंभव लगता है, वह कल स्वतंत्रता की अरुणिमा में संभव हो जायेगा। यदि भारत उस स्वतंत्रता को अनुभव करने लगता है तो फिर वह चीन के लिए उस स्वतंत्रता की मांग करेगा। रूस की मदद को दौड़ पड़ने के लिए रास्ता खुल जायेगा। अंग्रेजों ने मलाया अथवा वर्मा की भूमि पर अपने प्राण नहीं दिये हैं। हम इस स्थिति में कैसे सुधार ला सकेंगे? मैं कहां जाऊंगा और भारत की इस चालीस करोड़ जनता को कहां ले जाऊंगा? मानवता के इस विशाल सागर को संसार की मुक्ति के कार्य की ओर तब तक कैसे प्रेरित किया जा सकता है जब तक कि उसे स्वयं स्वतंत्रता की अनुभूति नहीं हो जाती? आज उसमें जीवन का कोई चिह्न शेष नहीं है। उसके जीवन के रस को निचोड़ लिया गया है। यदि उसकी आंखों की चमक को वापस लाना है तो स्वतंत्रता को कल नहीं बल्कि आज ही आना होगा। इसलिए मैंने कांग्रेस को यह शपथ दिलवाई है और कांग्रेस ने यह शपथ ली है कि वह करेगी या मरेगी। ❑

संवाद-समन्वय के लिए 'करो या मरो'

❑ देवप्रिय अवस्थी

9 अगस्त 1942 की जब-जब याद की जाती है, 'करो या मरो' का नारा बरबस स्मृति पटल पर उभर आता है। आज 77 बरस बाद यह नारा और भी प्रासंगिक हो गया है। 1942 में तो देश विदेशी आधिपत्य से जूझ रहा था। देश की बड़ी आबादी आजादी पाने के लिए अपना सब कुछ न्यौछावर कर देने के लिए तत्पर थी। तब कुछ ऐसे संगठन और लोग भी थे जो आजादी के आंदोलन से दूरी बनाए रखकर अंग्रेजी शासन की भरसक मदद कर रहे थे। दुर्भाग्य से उन लोगों के वैचारिक-सांगठनिक वंशज आज सत्ता में बैठकर उन मूलभूत मूल्यों और परंपराओं को नष्ट करने पर आमादा हैं जिन्हें देश ने बहुत त्याग और बलिदान देकर सींचा और संजोया है। देश को आज अपनी ही चुनी हुई सरकार के खिलाफ खड़े होना है। यह काम 1942 के 'करो या मरो' से कई गुना मुश्किल है।

मौजूदा दौर में देश की आबादी का एक बड़ा हिस्सा सत्ता के कार्य-कलापों से सशंकित, विचलित और किंकर्तव्यविमूढ़ है। उसे न तो सत्ता पक्ष और उसके तंत्र में कोई उम्मीद की किरण दिखती है और न ही लगभग नेस्तनाबूद हो चुके विपक्ष से। ऐसे में गैर राजनीतिक जन संगठनों और लोगों की एकजुटता में ही विकल्प के उभरने की संभावना नजर आ सकती थी, लेकिन ये संगठन और लोग बुरी तरह बिखरे हुए हैं। हकीकत है कि सैकड़ों संगठन और लाखों लोग अपने-अपने सामर्थ्य के मुताबिक सत्ता तंत्र और जन विरोधी व्यवस्था के खिलाफ सक्रिय हैं या सक्रिय हो रहे हैं, लेकिन उनके बीच किसी तरह के परस्पर संवाद और तालमेल के अभाव के चलते उनकी आवाज नक्कारखाने में तूती की आवाज बनकर रह जाती है। मुख्य धारा का मीडिया तो जानबूझकर उनकी अनदेखी करता ही है, आम लोगों में भी उनकी गतिविधियों और कार्यक्रमों के प्रति कोई आकर्षण या उत्साह नजर नहीं आता है।

इन परिस्थितियों मे सबसे बड़ी जरूरत अपने-अपने संगठन रूपी घरौंदों में सिमटे और उनसे सहानुभूति रखने वाले तमाम लोगों को जोड़ने वाला प्रभावी समन्वय तंत्र विकसित करने की है। ऐसा समन्वय तंत्र कुछ-कुछ 1974-1977 में बिहार आंदोलन की अगुवाई करनेवाली छात्र-युवा संघर्ष वाहिनी और लोक संघर्ष समिति जैसा हो सकता है, लेकिन हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि छात्र-युवा संघर्ष वाहिनी और लोक संघर्ष समिति के गठन और मार्गदर्शन के लिए हमारे पास जयप्रकाश नारायण जैसा विराट व्यक्तित्व था।

जेपी के आह्वान पर लाखों ऐसे लोग बिहार आंदोलन से जुड़े थे जो आम तौर पर राजनीतिक-सामाजिक गतिविधियों से पर्याप्त दूरी बनाकर रखते थे। यह बात अलग है कि बिहार आंदोलन के समय जेपी ने संपूर्ण क्रांति का जो नारा दिया था और जो सपने बुने थे, वे उनके जीवन काल में ही धूल-धूसरित हो गए। राजनीतिक-सामाजिक घटनाक्रम पर पैनी नजर रखनेवाले लोगों का एक बड़ा वर्ग मानता है कि बिहार आंदोलन सत्ता परिवर्तन का निमित्त बनकर रह गया और मौकापरस्त राजनेताओं ने उसे व्यवस्था परिवर्तन के उद्देश्य से भटका दिया। दूसरी तरफ कुछ लोग मानते हैं कि बिहार आंदोलन ने देश में नई राजनीतिक चेतना विकसित करने में प्रभावी भूमिका निभाई। उसकी वजह से ऐसे बहुत से लोग सार्वजनिक जीवन में सक्रिय हुए और आज भी जमीन पर बैठकर लोगों से जुड़कर काम कर रहे हैं।

अब सवाल उठता है कि जेपी जैसे व्यक्तित्व के अभाव में क्या हमें हाथ पर हाथ धरे बैठे रहना चाहिए या फिर व्यवस्था परिवर्तन की बिखरी ताकतों को जोड़ने के लिए अपने सामर्थ्य के मुताबिक जो भी और जितना भी संभव बन पड़े करना चाहिए। इस संदर्भ में बिहार आंदोलन के ठीक पहले हुए (1972-1974) गुजरात के नवनिर्माण आंदोलन और असम छात्र परिषद के बहिरागत विरोधी आंदोलन (1979-1985) के उदाहरण देखे जा सकते हैं। इन दोनों आंदोलनों में बिलकुल नया नेतृत्व उभरा था। ये आंदोलन संबंधित राज्यों में सत्ता परिवर्तन का माध्यम भी बने। एक आंदोलन ने सबसे कम आयु का मुख्यमंत्री दिया तो दूसरे के शिखर नेता ने राजनीति से दूर रहने का संकल्प जताया।

इसलिए जरूरी नहीं है कि हम किसी योग्य नेता की तलाश में बैठे रहें। हम स्वयं में निहित नेतृत्व के गुणों का भरपूर इस्तेमाल करें। हां, यह ध्यान जरूर रखें कि दूसरों में भी ये गुण हैं। हमें उनके विचारों को भी सम्मान देना होगा और उनके साथ संवाद व समन्वय करना होगा। एक बार संवाद और समन्वय के लिए समुचित माहौल बन जाए तो समान लक्ष्य लेकर आगे बढ़ने की राह आसान हो जाएगी। संवाद और समन्वय के लिए 'करो या मरो' जैसी भावना के बगैर गाड़ी आगे बढ़ने की उम्मीद नहीं की जानी चाहिए। ❑

भारत छोड़ो आंदोलन का प्रस्ताव

ऑल इंडिया कांग्रेस कमेटी की यह राय है कि ब्रिटेन भारत की रक्षा करने में सक्षम नहीं है। यह स्वाभाविक है कि भारत जो कुछ भी प्रयास करेगा वह अपनी रक्षा करने के लिए करेगा। भारत और ब्रिटेन के आपसी हितों में शुरू से ही टकराव रहा है और दोनों के लिए सुरक्षा के मायने भी अलग अलग हैं। भारत के राजनैतिक दलों पर ब्रिटेन का अब कोई भरोसा नहीं रहा । भारतीय सेना का जो अब तक स्वरूप है, उसके अनुसार वह देश को अपने अधीन मानती है। वह आम जनता को आत्मीयता से नहीं देखती और जनता से बिल्कुल अलग है। सेना की जनता के प्रति अविश्वास की यह नीति आज भी बरकरार है, इसीलिए राष्ट्रीय सुरक्षा के मामले में वह चुने गये जनप्रतिनिधियों पर कोई भरोसा नहीं करती है।

जापान का भारत के साथ कोई विवाद नहीं है। उसकी लड़ाई ब्रिटिश साम्राज्य के साथ है। इस युद्ध में भारत की सहभागिता उसके द्वारा चुने गए जनप्रतिनिधियों की सहमति से नहीं है। यह शुद्ध रूप से एक ब्रिटिश कृत्य है। अगर भारत स्वतंत्र होता है तो निश्चय ही वह जापान के साथ समझौता करेगा।

कांग्रेस की राय है कि ब्रिटिश को अब यहां से चले जाना चाहिए। भारत किसी भी जापानी या अन्य आक्रमण से अपनी रक्षा करने में सक्षम होगा। अतः कमेटी इस निर्णय पर पहुंचती है कि ब्रिटेन को अब भारत से वापस चले जाना चाहिए। उनका यह कहना कि उनको, भारतीय रजवाड़ों की रक्षा के लिये बने रहना चाहिए, पूरी तरह से अतार्किक है। यह इस बात को एक बार और प्रमाणित करता है कि वे येन केन प्रकारेण भारत पर कब्ज़ा जमाये रखना चाहते हैं। रजवाड़ों को निःशस्त्र भारत से भयभीत होने की कोई आवश्यकता नहीं है।

समाज में बहुसंख्यक और अल्पसंख्यक का भेद ब्रिटिश सरकार द्वारा किया गया है और यह मतभेद अंग्रेजों के वापस जाते ही समाप्त भी हो जाएगा। इन्ही सब कारणों से यह कमेटी (एआईसीसी) ब्रिटेन से अपील करती है कि वह अपनी और भारत की सुरक्षा तथा विश्व शांति के लिए अगर अन्य एशियाई और अफ्रीकी देशों से नहीं हटते हैं तो कम से कम भारत से अपना प्रभुत्व हटा लें।

कमेटी की यह इच्छा है कि वह जापान को आश्वस्त करे कि भारत की जापान या किसी भी देश के साथ कोई शत्रुता नहीं है। भारत विदेशी प्रभुत्व से केवल आज़ाद होना चाहता है। लेकिन अपनी आज़ादी की लड़ाई के संदर्भ में वह पूरे विश्व की सहानुभूति का इच्छुक तो है पर किसी से सैनिक सहायता के पक्ष में नहीं है। कमेटी इसी मत की है।

भारत अपनी आजादी अपनी अहिंसा की शक्ति के बल पर प्राप्त करेगा और उसी ताकत के बल पर उसे अक्षुण्ण भी रखेगा। अतः कमेटी यह आशा करती है कि जापान भारत में कोई गड़बड़ नहीं करेगा। लेकिन यदि जापान भारत पर हमला करता है और ब्रिटेन इस अपील (भारत छोड़ने) पर कोई प्रतिक्रिया नहीं देता है तो वे सभी, जो कांग्रेस की तरफ उम्मीद से देख रहे हैं, को जापानी सैन्य बलों के प्रति पूरी तरह से अहिंसक असहयोग का मार्ग अपनाना होगा और उन्हें कोई भी सहायता नहीं दी जाएगी। आक्रमण झेल रहे लोगों का यह कोई दायित्व नही है कि वे आक्रामकों की कोई सहायता करें। यह उनका कर्तव्य है कि वे आक्रमणकारियों का पूरी तरह से असहयोग करें। अहिंसक असहयोग का सरल सिद्धांत समझना कोई कठिन बात नही है।

पहला, हम किसी भी आक्रमणकारी के विरुद्ध घुटने नहीं टेकेंगे और उनका कोई आदेश नहीं मानेंगे। दूसरा, हम उससे किसी लाभ की अपेक्षा नहीं रखेंगे और न ही उससे मिलने वाले किसी उत्कोच या लाभ के लिए नीचे गिरेंगे, लेकिन हम उसके प्रति कोई दुर्भावना भी नहीं रखेंगे और न ही उसका कुछ बुरा हो, ऐसा सोचेंगे। तीसरा, यदि वे हमारे खेतों पर कब्ज़ा करने की बात करें तो हमें उन्हें यह करने देने से इनकार कर देना होगा। ऐसा करने के लिए हमें मरने के लिए भी तैयार रहना होगा। चौथा, यदि वे किसी बीमारी से ग्रसित होते हैं, या प्यास से मरने लगते हैं और हमारी सहायता (जान बचाने) के लिए चाहते हैं तो हमे इससे इनकार नहीं करना चाहिए। पांचवा, उन स्थानों पर जहां अंग्रेजों का जापानियों से युद्ध चल रहा है, वहां असहयोग का मार्ग अनावश्यक और निष्फल साबित होगा।

फिलहाल,ब्रिटिश सरकार के साथ, अभी असहयोग का विकल्प सीमित है। जब वे पूरी तरह से युद्ध में होंगे और अगर तब हम उनके साथ असहयोग करते हैं तो यह जानबूझकर देश को जापान के हाथो में सौंपना होगा। इसलिए, ब्रिटिश सेना के समक्ष कोई अवरोध हमें नहीं खड़ा करना है बल्कि हमारा असहयोग जापानी सेना के विरुद्ध होगा।

हमें ब्रिटिश का किसी भी मामले में सक्रिय सहयोग नहीं करना है। अगर हम उनके हालिया व्यवहार को देखें तो ब्रिटिश सरकार हमसे किसी भी प्रकार की सहायता की अपेक्षा नहीं रखती है, वह बस यह चाहती है कि हम उनके काम में कोई हस्तक्षेप न करें। वे हमारी मदद एक गुलाम के रूप में चाहते हैं।

यह आवश्यक नहीं है कि कमेटी यह घोषणा करे कि वह दुश्मन की राह में आने वाली हर उपयोगी चीज को नष्ट करने की नीति को लागू करेगी। अगर हमारे असहयोग के बावजूद देश का कोई भूभाग जापान की सेना के कब्जे में आ जाता है तो, हमें अपनी फसल और पानी के स्रोत को नष्ट नहीं करना है, यह केवल इसलिए कि हमें इसे पुनः प्राप्त करने में बहुत प्रयास करना होगा। युद्ध की सामग्री को नष्ट करना और बात है, जिसे कभी कभी कुछ सैन्य ज़रूरतों के कारण नष्ट करना पड़ता है।

हालांकि जापानी फौजों के खिलाफ असहयोग बहुत सीमित होगा पर अगर यह सदिच्छा से सचमुच में किया जाएगा तो, स्वराज प्राप्ति के लिए इसे हर हाल में फलीभूत करना पड़ेगा, क्योंकि लाखों लाख लोग एक रचनात्मक कार्य में लगे हुए हैं। बिना इसके पूरा देश लंबी सुसुप्तावस्था से उठ खड़ा हो, यह संभव नहीं है।

ब्रिटिश यहां रहते हैं या नहीं, यह अलग प्रश्न है पर हमारा यह कर्तव्य है कि हम बेरोजगारी को दूर करें, अमीर और गरीब के बीच के अंतर को कम करें, ब्रिटिश द्वारा फैलायी गयी साम्प्रदायिकता को खत्म करें, अस्पृश्यता के दैत्य को नष्ट करें और डकैतों से जनता को बचाएं। अगर हम सब मिल कर राष्ट्र निर्माण के इस दायित्व में मन से रुचि नहीं लेते हैं तो, आज़ादी एक सपना बनकर रह जायेगी और वह न तो अहिंसात्मक तरीके से और न ही हिंसात्मक रास्ते से पायी जा सकेगी।

स्वाधीनता संग्राम के सेनानियों, कमेटी यह मानती है कि किसी भी विदेशी सैनिक का भारत भूमि पर होना, भारत के हितों के विरुद्ध और भारत की आज़ादी के लिए घातक है। अतः कमेटी ब्रिटिश सरकार से यह अपील करती है कि वह सभी विदेशी सैनिकों को भारत से बाहर निकाले। भारत की विशाल जनशक्ति को देखते हुए यह शर्म की बात है कि यहाँ विदेशी सैनिक रहें। यह इस बात का प्रमाण है कि ऐसे ही ब्रिटिश साम्राज्य अमर बने रहना चाहता है।

मूल अंग्रेजी से हिन्दी अनुवाद—विजयशंकर सिंह ❑

सत्तर साल पहले

'मामनुस्मर युद्ध्य च'

❑ किशोरलाल घ. मशरूवाला

उचित कर्म क्या और अनुचित कर्म क्या इसका निर्णय करने में ज्ञानियों की बुद्धि भी चक्कर में पड़ जाती है, इसलिए मैं तुझे उचित कर्म बताता हूं, जिससे तू अशुभ से बचेगा—ऐसी प्रतिज्ञा गीताकार ने की। परंतु जब सारी गीता का जीवन भर पठन और मनन करने पर भी ज्ञानियों की बुद्धि तक वैसी की वैसी ही चक्कर में पड़ी हुई पायी जाती है, तब गीता की दुहाई देकर किसी सिद्धांत का समर्थन करने में खतरा मालूम होता है।

उसी गीता के आधार पर गांधीजी सत्यमय जीवन और सर्वोदय के सिद्धांत निश्चित करते रहे, और कहा जाता है कि उसी की दुहाई देकर उनके खूनी ने उनपर गोलियां चलायीं।

यह विचार सिर्फ नाथूराम गोडसे का है, ऐसी बात नहीं। संस्कृत और तत्त्वज्ञान के बड़े आचार्य भी गंभीरतापूर्वक कहते हैं कि गीता का उद्देश्य अर्जुन को युद्ध के लिए तैयार करना ही था। गीता को अहिंसा का प्रतिपादन करने वाला ग्रंथ नहीं माना जा सकता। ''मामनुस्मर युद्ध्य च'' (मेरा स्मरण कर और लड़ाई कर) ऐसी आज्ञा 'भगवान' देते हैं, और ''करिष्ये वचनं तव'' (मैं आपकी आज्ञा का पालन करूंगा) ऐसी अंत में अर्जुन 'भगवान' से प्रतिज्ञा करता है। गीता का तात्पर्य निकालने के लिए इससे अधिक प्रमाण क्या चाहिए? हजार गांधी और विनोबा गीता के नाम से हिंसा का निषेध करें, तो भी वह कैसे मान्य किया जा सकता है?

इस तरह परस्पर विरोधी अर्थ निकालने का प्रसंग केवल गीता पर ही नहीं है। बाइबिल, कुरान और दूसरे सब धर्मों के ग्रंथों से ऐसे एक दूसरे के उल्टे अर्थ निकाले जाते हैं, और जो ग्रंथ मनुष्यों को धर्म और अधर्म में विवेक सिखाने वाले शास्त्र माने गये हैं, वे ही विद्वानों के हाथ पड़ कर उन्हें ज्यादा उलझन में डालने वाले बन गये हैं।

असल बात यह है कि अक्सर मनुष्य क्या करने या पाने की इच्छा रखता है, इसका निर्णय वह पहले ही अपने आप कर लेता है, और फिर उस पर नैतिक समर्थन पाने के लिए धर्म और नीति में श्रेष्ठ माने हुए लोगों के वचनों को खोजता है। अगर उनमें से थोड़ा भी अनुकूल आधार मिल जाय तो उसे पकड़ लेता है और उसकी दुहाई दे देता है।

गांधीजी ने अपनी 'आत्मकथा' में इसका एक बड़ा अच्छा उदाहरण दिया है। बचपन में उन्हें एक नाटक देखने जाने की इच्छा हुई। पिताजी से आज्ञा मांगी। पिताजी ने अनुमति न दी। उन्होंने हठ पकड़ी और दो-चार बार मिन्नत करते रहे। आखिर पिताजी ने गुस्से में आकर कहा, ''जाओ, टलो!'' हो गया, आज्ञा मिल गयी! किस भाव से 'जाओ' कहा, उसे देखने की क्या जरूरत? 'जाओ' कहा, इतना पिताजी का आज्ञाधारक होने के लिए बस था!

1942 के आंदोलन में सब नेताओं के गिरफ्तार किये जाने पर 'तोड़ फोड़' का कार्यक्रम शुरू हुआ। वह करना है, ऐसा तो उसके प्रचारकों ने पहले से ही मन में पक्का कर रखा था, परंतु उसमें ज्यादा जान डालने के लिए और अधिक लोकमान्यता प्राप्त करने के लिए किसी अहिंसावादी का आधार ले लेना अच्छा था। मशरूवाला ने कह दिया कि ''अमुक अमुक शर्तों के साथ तार काटना और रेल की पटरी उखाड़ना अहिंसापूर्वक किया जा सकता है!'' बस! काम हो गया! शर्तों की बात तो अति सयाने लोग कहते ही रहते हैं! उनका कोई महत्त्व नहीं होता! महत्त्व की बात, यह काम किया जा सकता है, इतनी ही मानी गयी। लाखों परचे इस राय के बांटे गये, और मशरूवाला की 'गीता' के आधार पर यह कार्यक्रम चल पड़ा!

तात्पर्य यह कि आदमी धर्मग्रंथ अक्सर धर्म समझने के लिए नहीं खोजता, बल्कि अपने विचार के मुताबिक काम करने के लिए शास्त्र का आधार खोजता है।

अगर उसे अहिंसा से नफरत है, और हिंसा को वह जायज ठहराना चाहता है, तो गीता ही क्या, बुद्ध, महावीर और गांधी के वचनों के बल पर भी वह हिंसा का समर्थन करता है। अगर उसकी पहले से ही अहिंसा में रुचि जम गयी है और हिंसा के लिए घृणा पैदा हुई है, तो वह अहिंसा के अनुकूल प्रमाण आइसेनहावर, लिन्डवर्ग, हिटलर आदि युद्ध नेताओं के शब्दों में भी पा सकता है।

असल चीज हमारी अपनी स्वाभाविक श्रद्धा, संस्कार, मनोरचना और वृत्तियां हैं; न कि शास्त्र। हरएक शास्त्र में से हम अपने खयालों के अनुकूल अर्थ निकाल सकते हैं। योग्य भावना और गुणों के पोषण के बिना धर्माधर्म ठहराने के लिए शास्त्र निकम्मे हैं, खतरनाक भी।

गीता के सोलहवें अध्याय के अंत में अर्जुन से कहा गया है—''शास्त्र को प्रमाण समझकर तुम कर्तव्य-अकर्तव्य का निर्णय करो।'' परंतु यह अधूरी बात है। शास्त्र का प्रमाण कौन ले? कैसे ले? उसका अर्थ किस तरह बिठाये? एक विद्वान के अर्थ का दूसरा उतना ही मोटा (जबरदस्त) विद्वान खंडन कर देता है।

तब शास्त्र से ज्यादा महत्त्व की बात है, शास्त्र पढ़ने वाले की श्रद्धा, रुचि, गुण, संस्कार वगैरह। जिस तरह बीज भूमि और खाद से स्वतंत्र और ज्यादा असल वस्तु है, जिस तरह बीज भूमि और खाद से अपनी प्रकृति के अनुकूल तत्त्व खींचते हैं, और परिवर्तित करते हैं उसी तरह शास्त्र-विधि या शास्त्र-प्रमाण से ज्यादा असल चीज है शास्त्र का अर्थ करने वाला।

शास्त्र विधि को छोड़कर काम करने वाले दो तरह के होते हैं, ''यो वर्तते कामकारतः'' (अपने रागद्वेषादि से चलने वाला), और ''यो यजते श्रद्धयान्वितः'' (श्रद्धा से चलने वाला)। रागद्वेष से चलने वाले शास्त्र का प्रमाण बतावें तो भी मिथ्या है, न बतावें तो अच्छा ही है। परंतु जो श्रद्धामय है, और सात्त्विक श्रद्धायुक्त है, वह शास्त्रविधि को छोड़कर चले तो भी सलामत हो सकता है, शास्त्रविधि से तो वह कुशल कर्ता होता ही है। हमें शास्त्रों की अपेक्षा सुसंस्कार, सद्गुण, सद्भावना पर ज्यादा जोर देना चाहिए। उसके बाद ही शास्त्र की उपयुक्तता सोची जा सकती है।

(सर्वोदय, 1 अगस्त 1949 से) ❑

भारत छोडो आंदोलन

आज़ादी के आंदोलन का स्वर्णिम अध्याय

❑ विजय शंकर सिंह

मुम्बई में कांग्रेस कार्य समिति की बैठक 8 अगस्त को हुई और कांग्रेस ने महात्मा गांधी को स्वाधीनता आंदोलन के संबंध में निर्णय लेने के लिए अधिकृत कर दिया। उसी रात गवालिया टैंक के मैदान में केवल घुटने तक धोती पहने गांधी मंच पर नमूदार हुए। वे एक अच्छे और उन्मादी वक्ता नहीं थे, पर जन संप्रेषक वे गज़ब के थे। सत्तर मिनट के भाषण में उन्होंने अपनी बात कही और फिर निर्णायक आंदोलन के लिए जनता का आह्वान किया। वही आह्वान आज़ादी के आंदोलन का आखिरी उद्घोष बना। वह निर्णायक उद्घोष था, अंग्रेजों भारत छोड़ो। यह नारा मुंबई कांग्रेस के नेता, यूसुफ मेहर अली के दिमाग की उपज थी। इसका भी एक रोचक इतिहास है।

आज़ादी की लड़ाई में दो नारे सबसे अधिक लोकप्रिय हुए और वे थे, साइमन गो बैक और भारत छोड़ो। भारत छोड़ो आंदोलन अचानक नहीं शुरू हुआ था, बल्कि इसकी भूमिका पहले से ही बन रही थी। मुम्बई में कांग्रेस वर्किंग कमेटी की मीटिंग के पहले वर्धा में इसकी एक मीटिंग 14 जुलाई 1942 को हुई थी। उस मीटिंग में आज़ादी के लिए और अधिक इंतज़ार न करने का संकल्प लिया गया और एक बड़ा तथा निर्णायक आंदोलन छेड़ने पर सहमति बनी। इसके बाद उक्त आंदोलन की रूपरेखा बनी। इसके पूर्व हुए बड़े आंदोलनों—असहयोग आंदोलन, नमक सत्याग्रह तथा सविनय अवज्ञा आंदोलन के समान इस भावी आंदोलन का भी नाम रखने पर चर्चा हुई। गांधी जी के निकट सहयोगी सी राजगोपालाचारी (राजाजी) ने एक नारा सुझाया, रिट्रीट और विथड्रॉल। पर यह नारा गांधी जी को नहीं जंचा। तभी यूसुफ मेहर अली ने यह नारा दिया, क्विट इंडिया, भारत छोड़ो। गांधी जी ने इस नारे को स्वीकार कर लिया और इस प्रकार देश की आज़ादी के सबसे बड़े जन आंदोलन का यह मुख्य उद्घोष बना।

सन बयालिस के इस महान आंदोलन के पहले की राजनीतिक गतिविधियां क्या थीं, उनका उल्लेख भी आवश्यक है। 1935 में गवर्नमेंट ऑफ इंडिया एक्ट पास हुआ। 1935 के भारतीय शासन/सरकार अधिनियम के अनुसार निम्न मुख्य बातें तय की गयीं थीं।

एक अखिल भारतीय संघ की स्थापना की जाएगी जिसमें ब्रिटिश भारत के प्रान्तों के अतिरिक्त देशी नरेशों के राज्य भी सम्मिलित होंगे. प्रान्तों को स्वशासन का अधिकार दिया जाएगा. शासन के समस्त विषयों को तीन भागों में बाँटा गया – संघीय विषय, जो केंद्र के अधीन थे; प्रांतीय विषय, जो पूर्णतः प्रान्तों के अधीन थे; और समवर्ती विषय, जो केंद्र और प्रांत दोनों के अधीन थे. परन्तु यह निश्चित किया गया कि केंद्र और प्रान्तों में विरोध होने पर केंद्र का ही कानून मान्य होगा. प्रांतीय विषयों में प्रांतों को स्वशासन का अधिकार था और प्रांतों में उत्तरदायी शासन की स्थापना की गई थी अर्थात् गवर्नर व्यवस्थापिका-सभा के प्रति उत्तरदायी भारतीय मंत्रियों की सलाह से कार्य करेंगे. इसी कारण यह कहा जाता है कि इस कानून द्वारा प्रांतीय स्वशासन की स्थापना की गई। केंद्र या राज्य सरकार के लिए द्वैध शासन की व्यवस्था की गई जैसे 1919 ई. के कानून के अंतर्गत पहले भी प्रान्तों में की गई थी। भारतीय सरकार अधिनियम, 1935 के अंतर्गत एक संघीय न्यायालय की स्थापना की गई। एक केन्द्रीय बैंक—रिजर्व बैंक की स्थापना की गई। बर्मा और अदन को भारत के शासन से अलग कर दिया गया। सिंध और उड़ीसा के दो नवीन प्रांत बनाए गए और उत्तर-पश्चिमी सीमा-प्रांत को गवर्नर के अधीन रखा गया। गवर्नर-जनरल और गवर्नरों को कुछ विशेष दायित्व, जैसे भारत में अंग्रेजी राज्य की सुरक्षा, शान्ति, ब्रिटिश सम्राट और देशी नरेशों के सम्मान की रक्षा, विदेशी आक्रमण से रक्षा आदि प्रदान किए गए। इस कानून के द्वारा केंद्र और प्रांत दोनों के लिए मत देने की योग्यता में कमी कर दी गई, जिसके परिणामस्वरूप मतदाताओं की संख्या बढ़कर 13% हो गई, जबकि 1919 ई. के कानून के अंतर्गत यह केवल 3% थी.

देश में पहली बार आम चुनाव सन् 1937 में हुए थे। यह चुनाव 1935 के अधिनियम के अंतर्गत सम्पन्न हुए थे। इसके लिए 1935 में ब्रिटिश संसद ने भारतीयों को प्रांतीय शासन के प्रबंध का अधिकार दिया था, जिसकी वजह से पहली बार भारत में चुनाव कराए गए थे।

इस चुनाव में, कांग्रेस को आगरा व अवध के संयुक्त प्रान्त, मध्य प्रांत व बरार (अब मध्य प्रदेश), मद्रास, उड़ीसा तथा बिहार में पूर्ण बहुमत प्राप्त हुआ। इस तरह केंद्रीय व्यवस्थापिका सभा में कांग्रेस सबसे बड़े दल के रूप में उभरी। कांग्रेस को अंग्रेजों की ओर से यह आश्वासन मिला हुआ था कि वह जो सरकार गठित करेगी, उसमें गवर्नर जनरल बिना वजह हस्तक्षेप नहीं करेंगे। इसके बाद कांग्रेस ने आठ प्रांतों में अपनी सरकार बनाई। सिंध, उत्तर पश्चिम सीमा प्रांत तथा असम में मिला-जुला मंत्रिमंडल गठित हुआ। पंजाब में यूनियनिस्ट पार्टी ने तथा बंगाल में कृषक प्रजा पार्टी और मुस्लिम लीग ने मिलकर सरकार बनाई।

1937 में प्रांतीय विधानसभा चुनावों के साथ ही विधान परिषदों के लिए भी चुनाव संपन्न कराये गए। पांच प्रांतों—बम्बई, मद्रास, बंगाल, बिहार और उत्तर प्रदेश के विधान

परिषदों के लिए संपन्न चुनाव में कांग्रेस को आंशिक सफलता प्राप्त हुई। तब बिहार में विधान परिषद की 26 सीटें थीं, जिनमें से आठ पर कांग्रेस को सफलता मिली थी। सबसे ज्यादा मद्रास की 46 सीटों में से 26 कांग्रेस के पक्ष में गई थीं।

चुनाव के दो साल बाद ही 1939 में दूसरा विश्वयुद्ध प्रारंभ हो गया। भारतीय विधान मंडल की सहमति के बिना ब्रिटिश सरकार ने भारत को युद्ध में झोंक दिया। ऐसे में देश में आपातकाल की घोषणा कर दी गई। कांग्रेस ने मांग रखी कि युद्ध के बाद भारत को स्वतंत्र कर दिया जाए। सरकार ने इस मांग की उपेक्षा की, लिहाजा कांग्रेस कार्यकारिणी के निर्देश पर 15 नवम्बर, 1939 को प्रांतीय कांग्रेस मंत्रिमंडलों ने इस्तीफा दे दिया।

जब सभी कांग्रेस सरकारों ने त्यागपत्र दे दिया तो अंग्रेजों को दुनिया के सामने भारतीय जन समर्थन दिखाने के लिए, स्थानीय राजनीतिक दलों और नेताओं का साथ चाहिए था। यह साथ उसे मिला मुस्लिम लीग के मुहम्मद अली जिन्ना और हिंदू महासभा के सावरकर से। 1940 में लाहौर अधिवेशन में मुस्लिम लीग ने धर्म के आधार पर मुसलमानों के लिए एक अलग स्वतंत्र देश पाकिस्तान की मांग के लिए प्रस्ताव पास कर दिया था। उधर 1937 में हिंदू महासभा के अधिवेशन में सावरकर ने हिंदू धर्म के आधार पर हिंदू राष्ट्र की बात उठा दी थी। अब यह साम्प्रदायिक विभाजन का चरम था। पर देश की सबसे लोकप्रिय पार्टी कांग्रेस इन सबसे दूर, स्वाधीनता संग्राम के अंतिम और निर्णायक आंदोलन के लिये खुद को तैयार कर रही थी।

भारत छोड़ो आंदोलन के इस प्रस्ताव ने पूरी लड़ाई को नया मोड़ दे दिया था। उसी रात ब्रिटिश राज ने गांधी जी सहित सभी बड़े कांग्रेसी नेताओं को जेल में डाल दिया। कांग्रेस के इस सम्मेलन में महात्मा गांधी ने जो भाषण दिया था, उसी भाषण में उन्होंने नारा दिया था 'करो या मरो'.

गांधी जी को पूना के 'आगा ख़ाँ महल' में तथा कांग्रेस कार्यकारिणी के अन्य सदस्यों को अहमदनगर के दुर्ग में रखा गया। कांग्रेस को अवैध संस्था घोषित करके इसकी सम्पत्ति जब्त कर ली गई। जुलूसों पर भी प्रतिबंध लगा दिया गया. गांधी जी सहित सभी बड़े नेता जेल में थे तो आंदोलन को भूमिगत युवा नेताओं, जयप्रकाश नारायण और डॉ राममनोहर लोहिया तथा आम जनता ने खुद ही संचालित किया। आंदोलन की तीव्रता बढ़ती जा रही थी और अंग्रेज सरकार हैरान थी कि बिना किसी नेता के आंदोलन चरम पर कैसे पहुंच रहा है।

सरकार ने जब इस जन आन्दोलन को दबाने के लिए लाठी और बंन्दूक का सहारा लिया तो जनता भी उग्र और हिंसक हो गई। रेल की पटरियाँ उखाड़ी गईं और स्टेशनों को आग के हवाले कर दिया गया। मुंबई, अहमदाबाद जमशेदपुर में मज़दूरों ने हड़ताल कर दी। संयुक्त प्रांत में बलिया एवं बस्ती, मुम्बई में सतारा, बंगाल में मिदनापुर एवं बिहार के कुछ भागों में 'भारत छोड़ो आन्दोलन' के समय जनता ने अपने स्थानीय नेता चुन कर अस्थायी सरकारों का ऐलान कर दिया। सरकार ने 13 फ़रवरी, 1943 ई. को 'भारत छोड़ो आन्दोलन' के समय हुए विद्रोहों का पूरा दोष महात्मा गाँधी एवं कांग्रेस पर लगा दिया. भारत में इस आंदोलन को अगस्त क्रांति के नाम से भी जाना जाता है।

1945 की अगस्त में उधर अमेरिका ने जापान के हिरोशिमा और नागासाकी पर बम गिरा दिया था और उसी के बाद वह विश्व युद्ध समाप्त हो गया। मुसोलिनी को उसी की जनता ने सड़क के किनारे लैंपपोस्ट से लटका कर फांसी दे दी। हिटलर ने आत्महत्या कर ली। जापान ने तो अपने दो नगरों हिरोशिमा और नागासाकी की तबाही के बाद युद्ध से ही तौबा कर लिया।

जिन्ना और सावरकर ने उस कठिन समय में अंग्रेजों का जो साथ दिया था, उसका तो उन्हें पुरस्कार मिलना ही था। जिन्ना एक स्वतंत्र मुस्लिम राष्ट्र के लिए ज़िद पर थे। उनके साथ मुसलमानों का बहुमत भी था। मौलाना आज़ाद, और खान अब्दुल गफ्फार खान जैसे नेता जिन्ना के खिलाफ कांग्रेस के साथ थे। काश, मुसलमानों में सरहदी गांधी जैसा कोई दमदार धर्मनिरपेक्ष व्यक्तित्व उस समय पंजाब और बंगाल में होता तो हो सकता था कि जिन्ना का उद्देश्य पूरा नहीं हो पाता। पर काश से न तो इतिहास बदलता है और न ही जीवन।

भारत छोड़ो आंदोलन के विरोध में मुस्लिम लीग, हिंदू महासभा तो थी ही, हिंदू महासभा के नेता डॉ श्यामाप्रसाद मुखर्जी तो मुस्लिम लीग के साथ सरकार में मंत्री भी थे। वे 1942 के आंदोलनकारियों के दमन के पक्ष में अंग्रेजों के साथ थे। पर उस आंदोलन में कम्युनिस्ट पार्टी भी भारत छोड़ो आंदोलन के साथ नहीं थी।

पहले द्वितीय विश्व युद्ध में सोवियत रूस शामिल नहीं हुआ था। वह इस पचड़े से अलग था। उसके लिए यह विश्वयुद्ध बुर्जुआ और पूंजीवादी ताकतों का आपसी स्वार्थ युद्ध था। पर जब जर्मनी ने 1941 में सोवियत रूस पर हमला कर दिया और उसे लगा कि हिटलर मास्को तक चला आएगा, तब सोवियत रूस भी उस युद्ध में मित्र राष्ट्रों के साथ आ गया। अब जब रूस ब्रिटेन के साथ हो गया तो देश का कम्युनिस्ट आंदोलन जो सोवियत रूस के साथ था, कैसे ब्रिटिश साम्राज्य के खिलाफ किसी जन आंदोलन में भाग लेता ?

इस आंदोलन ने देश को जय प्रकाश नारायण, डॉ राम मनोहर लोहिया, अरुणा आसफ अली जैसे दूसरी पंक्ति के जुझारू नेता दिये। उस समय तीन बड़ी घटनाओं के कारण अंग्रेजों ने मन बना लिया था कि वे अब भारत को गुलाम नहीं बनाए रख सकते। एक तो भारत छोड़ो आंदोलन की स्वतःस्फूर्त व्यापकता ने, जबकि कांग्रेस के सारे नेता जेल में थे, दूसरे, नेताजी सुभाष बाबू के नेतृत्व में आज़ाद हिंद फौज के हमले के कारण, तीसरे 1945 में नेवी में विद्रोह के कारण। एक और कारण इसमें जोड़ा जा सकता है कि देश की साम्प्रदायिक स्थिति बेहद तनावपूर्ण हो गयी थी। उधर ब्रिटेन द्वितीय विश्वयुद्ध जीत तो गया था पर वह अब इस लायक नहीं बचा था कि भारत जैसे बड़े, प्रबुद्ध और जाग्रत उपनिवेश को पहले की तरह बनाये रख सके। ❑

स्वतंत्रता आंदोलन एवं गांधी का नेतृत्व

❑ डॉ. विवेक कोरडे

भारतीय स्वातंत्र्य आंदोलन के नेता राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के जन्म का यह शतकोत्तर सुवर्ण महोत्सवी वर्ष केवल भारत में ही नहीं, विश्व के 185 से ज्यादा देशों में मनाया जा रहा है। करीब 600 से अधिक विश्वविद्यालय गांधी अभ्यास केन्द्र चलाते हैं और हजारों विद्यार्थी हर साल गांधीजी के कार्य, विचार और लेखन पर डॉक्टरेट करते हैं। गुजर जाने के सात दशक बाद भी दुनिया के बहुतांश अहिंसक आंदोलनों के नेता गांधीजी को अपना आदर्श मानते हैं, प्रेरणास्रोत मानते हैं।

गांधीजी का सारा जीवन एक प्रदीर्घ संघर्ष का जीवन है। 1893 से 1914 तक दक्षिण अफ्रीका में और 1917 से 1948 तक का संघर्षमय जीवन गांधीजी ने भारत में जिया। संघर्ष की प्रदीर्घता को लेकर अगर उनकी किसी से तुलना करनी हो तो वह लेनिन से की जा सकती है, लेकिन गांधीजी के संघर्ष और अन्य संघर्षों में एक मूलभूत फर्क था। वह कहते थे कि ''मैं एक संघर्षशील मनुष्य हूं। लेकिन अन्य संघर्षों और मेरे संघर्ष में एक फर्क है। मेरा संघर्ष किसी के भी खिलाफ नहीं होता। मेरा संघर्ष सिर्फ मेरे ही खिलाफ चलता है। इसलिए उसमें न किसी की हार होती है, न किसी की जीत। यह विशेषता उनके नेतृत्व को एक अलग ऊंचाई पर ले जाती है। इस विशेषता के कारण संघर्ष में जो जीतता है, उसको उन्माद नहीं होता और हारने वाले को विषाद नहीं होता। सामाजिक शांति और सद्भावना भंग नहीं होती।

'सर्वाइवल ऑफ द फिटेस्ट' का सिद्धांत चार्ल्स डार्विन ने 19वीं सदी में रखा। जीवन में जो सबल होगा वही बचेगा, यह उस सिद्धांत का आशय है और यह बताने के लिए डार्विन की आवश्यकता नहीं है। सदियों से जग इसी तरह चलता है, चल रहा है। लेकिन अगर यह बात त्रिकाल बाधित सत्य मानकर चलें, संघर्ष में हमेशा बलवानों की ही जीत होगी, ऐसा मानकर चलें, तो फिर दुनिया में निर्बल, कमजोर, असहाय लोगों के संघर्ष कभी भी सफल नहीं होंगे, ऐसा मानना पड़ेगा। यहां गांधी विचार और नेतृत्व जो मार्गदर्शन करता है, वह सारी दुनिया के अहिंसक आंदोलनों का आधार बन चुका है। मारने की शक्ति महत्त्व रखती है, लेकिन किसी सिद्धांत के लिए, न्याय के लिए अपनी जान न्योछावर करने की शक्ति, सत्य की स्थापना के लिए मरने की शक्ति, आत्मक्लेश करा लेने की शक्ति, मारने की शक्ति से अधिक महत्त्व रखती है। कुछ लोगों के पास होने वाली इस शक्ति का सार्वत्रिकीकरण ही गांधीजी के संघर्ष की विशेषता है और इसी विशेषता का नाम 'सत्याग्रह' है। सत्याग्रह का मतलब एक मनुष्य का दूसरे मनुष्य की मनुष्यता पर किया हुआ विश्वास है। उस मनुष्यता को लगायी हुई पुकार है। इसलिए गांधी कहते थे कि 'पाप से नफरत करो, पापी से नहीं'। इसी तत्त्व के गांधी उपासक थे और इसी कारण वह उन्हें जेल में डालने वाले और अपमानित करने वाले जनरल स्मट्स को खुद के हाथ से बनाया हुआ जूता उपहार में दे सके।

ऐसे गांधी 9 जनवरी 1915 में दक्षिण अफ्रीका से हमेशा के लिए भारत लौट आये। उनके गुरु गोपाल कृष्ण गोखले दो साल भारत भ्रमण पर निकल पड़े। भारत समझ लिया, भारत के लोगों को समझ लिया, उनके दुख-दर्द, उनकी समस्याएं, उनके गुण-दोष, उनके बलस्थान और उनकी खामियों को भी समझ लेने की कोशिश की और एक नया भारत संगठित होने लगा। गांधीजी ने कांग्रेस के स्वतंत्रता आंदोलन का नेतृत्व किया। ऐसा कहना गलत तो नहीं होगा लेकिन गांधीजी ने भारत के स्वतंत्र्य आंदोलन को पहले संगठित किया और फिर उसका नेतृत्व किया, यह कहना ज्यादा सही होगा क्योंकि गांधीजी ने इस देश की आम जनता को संगठित किया। आम जनता के सवालों पर संघर्ष किया।

इसी दौरान कांग्रेस की वार्षिक सभा में बिहार के कुछ नेता चंपारण के किसानों के वहां के ब्रिटिश जमींदारों द्वारा शोषण के सवाल को लेकर गांधी से मिले। उनकी अपेक्षा थी कि इस संबंध में गांधी उस सभा में प्रस्ताव रखें, यही कांग्रेस की परंपरा भी थी। लेकिन गांधीजी ने ऐसा प्रस्ताव रखना उचित नहीं माना। उन्होंने कहा कि वह खुद चंपारण आयेंगे। यथावकाश गांधी चंपारण पहुंचे और भारत के स्वतंत्रता संग्राम का नया अध्याय शुरू हुआ। अपने अनोखे मार्ग से गांधीजी ने जो संघर्ष किया, उसका सबसे पहला परिणाम यह हुआ कि उन गरीब किसानों को गांधी के नेतृत्व में ऐसा महसूस हुआ कि यह एक अलग इन्सान है। गांधीजी ने सबसे पहला काम उनके मन से भय निकालने का किया, साथ ही कितना भी अत्याचार हो, लेकिन कोई भी इसका प्रतिकार नहीं करेगा, अहिंसा का यह संदेश भी दिया। वहां जो बड़े-बड़े वकील और अन्य सुशिक्षित लोग शहरों से आये थे, उन्हें एक साथ खाना बनाना और खाना भी सिखाया। स्थानीय लोगों को सार्वजनिक सफाई और निजी सफाई का ज्ञान दिया। बच्चों और बड़ों के लिए स्कूल शुरू किये। आरोग्य केन्द्र शुरू किये। एक आंदोलन में गांधी यह सभी बातें शामिल करते रहे क्योंकि उनका आंदोलन केवल उस समस्या का निवारण करने हेतु नहीं था, वह एक नये भारत के निर्माण की नींव थी। उसके बाद खेड़ा, बारडोली जैसे किसानों के संघर्ष और उन आंदोलनों में गरीब किसानों के साथ जमींदारों को भी साथ लेने से देश में एक नयी लहर पैदा हुई। इस देश के गरीब किसानों के उत्थान का, मजदूरों के उत्थान का, दलित, अस्पृश्य, महिलाओं, सभी के उत्थान का आशय गांधी ने भारत के स्वातंत्र्य आंदोलन से जोड़ा। गांधी के दुबले हाथ ने मुट्ठीभर नमक उठाया और एक बलाक्ष गौरवशाली साम्राज्य की बुनियाद हिलने लगी क्योंकि भारतीयों के तन-मन-धन की ताकत गांधी की दुबली मुट्ठी में इकट्ठी हुई थी। गांधीजी ने इस देश के करोड़ों नागरिकों के दिल में राष्ट्रवाद जगाया और उस राष्ट्रवाद में सभी के उत्थान का आशय भर दिया। इसी कारण राष्ट्रवाद भी जाग गया और नये भारत के आइडिया ऑफ इंडिया का निर्माण भी शुरू हुआ। इसी कारण गांधीजी इस नये राष्ट्र के राष्ट्रपिता बन गये।

स्वदेशी, हिन्दू-मुस्लिम एकता और

अस्पृश्यता निर्मूलन गांधीजी के स्वराज के त्रिसूत्र थे और तीनों बातों को वह समान महत्त्व देते थे। व्यापार हेतु आये अंग्रेजों द्वारा इस देश के परंपरागत उद्योग और उन पर अवलंबित कारीगरों की बरबादी गांधी देख चुके थे, इसलिए उन्होंने स्वदेशी को लड़ाई का हथियार बनाया। चरखा चला चलाकर लेंगे स्वराज, आज इस गीत का मजाक उड़ाया जाता है। चरखा चलाकर स्वराज नहीं मिलता, यह बात गांधी भी जानते थे। लेकिन गांधी यह भी जानते थे कि एक व्यक्ति के कहने से जब लाखों हाथ चरखा चलाते हैं, तो उस संगठन से स्वराज आता है। गांधीजी का स्वातंत्र्य आंदोलन लोक संगठन पर खड़ा था। चरखा शोषण के खिलाफ लड़ाई का प्रतीक बना। क्योंकि उसमें उपभोक्ता भी था और उत्पादक भी था।

हिन्दू-मुसलमान एकता गांधी के स्वराज का अविभाज्य अंग थी। यह 'फूट डालो और राज करो' की ब्रिटिश नीति को दिया हुआ जवाब तो था ही, लेकिन उसी के साथ हमारे धर्म, वंश, संप्रदाय, उपासना पद्धति और अलग रहकर भी हम शांति और अहिंसा पर आधारित एक नया विश्व बना सकते हैं, इसका सबूत भी गांधी दुनिया को देना चाहते थे। उसी एकता के लिए गांधी जिये और मरे भी।

अस्पृश्यता निवारण को गांधीजी ने केवल अपने जीवन में ही नहीं, अपने हर विचार और कृति का हिस्सा बनाया था। गुलामी गांधी के लिए तिरस्कार का विषय थी। वह कलंक दूर करने के लिए वे खुद भंगी बने। दूसरे को ऊपर उठाना मनुष्यत्व है। लेकिन उसके साथ नीचे गिरकर उसके साथ ऊपर उठना दिव्यत्व है। यह दिव्यत्व महात्मा के नेतृत्व में ओतप्रोत था।

महात्मा के रामराज्य, स्वदेशी, स्वच्छता, गोरक्षण आदि सभी बातों को आज अलग तरह से समाज के सामने लाया जा रहा है। उनके सर्वधर्म समभाव के तत्त्व को तो दिनदहाड़े लताड़ा जा रहा है। महात्मा के जगाये हुए राष्ट्र को एक अलग राष्ट्रवाद की नशीली घुट्टी पिलायी जा रही है और समाज में नागरिक का रूपांतर झुंड में किया जा रहा है, ऐसे वक्त में महात्मा के विचार और जिस विश्व के निर्माण के लिए उनकी कोशिश थी, वह सारी बातें जनता के सामने रखना उनको उनके जन्म के 150वें वर्ष में उचित आदरांजलि होगी। ❑

आमंत्रण

अगस्त क्रांति दिवस पर संगोष्ठी

आज़ादी की लड़ाई : तब और अब

देश को आजाद हुए बहत्तर वर्ष हो गये, किन्तु इतना लंबा समय बीत जाने के बाद भी आजादी देश के अंतिम जन तक नहीं पहुंची। गांधी ने कहा था कि इंग्लैंड की तर्ज पर पार्लियामेंटरी ढंग की आजादी पाना मेरा उद्देश्य नहीं है लेकिन फिलहाल मेरी लड़ाई उसी के लिए है, क्योंकि स्वराज तक पहुंचने का रास्ता इस पड़ाव से होकर ही गुजरेगा। अब पार्लियामेंटरी ढंग की आजादी तो गांधी के जीवनकाल में मिल गयी किन्तु उसके आगे देश को स्वराज की मंजिल तक ले जाने के लिए गांधी हमारे बीच नहीं रहे। गांधी के भारत का सपना 30 जनवरी 1948 को टूट गया। गांधी का अंतिम जन अपनी झोपड़ी में ही छूट गया और आधुनिक सभ्यता का शैतान गांधी का सपना लूट गया।

कथित तौर पर देश का संविधान देश के हर नागरिक को संरक्षण प्रदान करता है। देश का संविधान देश के सभी नागरिकों को प्राण और दैहिक स्वतंत्रता का अधिकार एवं सम्मानयुक्त जीवन जीने का अधिकार देता है। लेकिन गांधी का अंतिम जन संविधान की इस विहंगम छाया से भी छूट गया है। इन बहत्तर सालों में इस अंतिम जन की व्याप्ति बढ़ी है। 1947 की तुलना में आज 2019 में उसने ज्यादा जगह घेरी है। लेकिन अफसोस ये कि जीवन जीने की उसकी सुविधाएं नहीं बढ़ी हैं। यह अंतिम जन गांधी के सपनों में आता था, इसी अंतिम जन के लिए गांधी ने सपने देखे थे। यही वह अंतिम जन है, जिसके लिए गांधी तब विदेशी सत्ता के क्रूर पंजों से टकराये थे। यही वह अंतिम जन है जो आज बहत्तर साल बाद भी सत्ता के क्रूर पंजों में फंसा हुआ है। यही वह अंतिम जन है जो सत्ता का पूरा बोझ अपनी पीठ पर उठाये हुए है।

1942 में हमारी लड़ाई विदेशी हुकूमत से थी पर आज जिस परिस्थिति का निर्माण हुआ है उसमें लगता है कि अपने ही लोगों ने विदेशी हुकूमत की जगह ले ली है और जनता पर शोषण एवं दमन का चक्र बदस्तूर चल रहा है। ऐसे में यह आवश्यक हो गया है कि हम नये सिरे से आज़ादी की लड़ाई की शुरुआत करें और आजादी मिलने के बहत्तर साल बाद भी जिन्दगी की बुनियादी जरूरतों और मुद्दों से जूझ रहे पीड़ित, शोषित और वंचित अंतिम जन के पक्ष में खड़े हों। केवल समय बदला है, परिस्थितियां नहीं बदलीं। इसलिए परिस्थितियों से टकराने की जरूरत भी उतनी ही है और समस्याओं के समाधान के रास्ते भी वही हैं, जो गांधी ने दिखाये थे। इस सन्दर्भ में एक संगोष्ठी का आयोजन किया गया है। 9 अगस्त 1942 का दिन, अंग्रेजों भारत छोड़ो के आवाहन का दिन है। देशभर से साथी आ रहे हैं। 9 अगस्त 2019 को भारत छोड़ो आंदोलन के 77 साल पूरे हो रहे हैं। विमर्श का विषय होगा—आजादी की लड़ाई : तब और अब। अतीत के सबक होंगे और भविष्य के संदर्भ भी। चर्चाएं भी होंगी, योजनाएं भी बनेंगी। मिलजुलकर एक दिशा तय करेंगे। हमारी चर्चा एवं योजना के केन्द्र में अंतिम जन होगा।

स्थान : **सर्व सेवा संघ परिसर, राजघाट, वाराणसी**
दिनांक : **9 अगस्त, 2019, प्रातः 10 बजे**
अतिथि विशेष : **1. संतोष भारतीय, संपादक : चौथी दुनिया एवं पूर्व सांसद**
2. रामदत्त त्रिपाठी, वरिष्ठ पत्रकार एवं बीबीसी के पूर्व ब्यूरो चीफ
3. महादेव विद्रोही, अध्यक्ष, सर्व सेवा संघ

-: निवेदक :-

डॉ. मोहम्मद आरिफ
सामाजिक कार्यकर्ता

भगवान सिंह
अध्यक्ष, उत्तर प्रदेश सर्वोदय मंडल

डॉ. मुनीजा रफीक खान
गांधी विद्या संस्थान

रमेश पंकज
मंत्री
सर्व सेवा संघ

डॉ. मधुसूदन
ट्रस्टी
सर्व सेवा संघ

अगस्त क्रान्ति की चुनौती

❑ भवानी शंकर कुसुम

हम 'भारत छोड़ो' आन्दोलन की 77वीं वर्षगांठ मनाने जा रहे हैं। लेकिन संकुचित धर्म, साम्प्रदायिकता, व्यक्तिवाद, भाषा और क्षेत्रीयता जैसे विनाशकारी तत्व गांधी की परिकल्पना के देश को निगलने को आतुर प्रतीत हो रहे हैं। मेरे विचार से इसके मूल में स्वतंत्रता आन्दोलन के इतिहास के बारे में नई पीढ़ी का अपरिचित होना है।

लोकसभा चुनाव के दौरान गांधी-नेहरू के बारे में चार पांच युवाओं को हास्यास्पद तरीके से बात करते देख, दखल देते हुए मैंने पूछा- क्या आपने कभी हिन्दुस्तान की कहानी पढ़ी है? उन्होंने कहा 'नहीं'। फिर पूछा, 'ग्लिम्प्सेज ऑफ वर्ल्ड हिस्ट्री' के बारे में सुना है? जवाब था, 'ये हमारे कोर्स में कभी नहीं रही।' फिर पांच मिनट उनके पास बैठकर मैंने उन्हें बताया कि ये दोनों विश्व प्रसिद्ध ऐतिहासिक पुस्तकें पंडित जवाहर लाल नेहरू ने लिखी थी और वह भी जेल में रहते हुए। उनके आश्चर्य का ठिकाना नहीं था। कुछ देर के प्रश्नोत्तर के बाद उन्हें सन्तुष्ट देख, मैंने कहा-अगर हिन्दुस्तान को समझने की इच्छा हो, तो ये पुस्तकें मुझसे ले जाओ, फिर गांधी और नेहरू की आधारहीन आलोचना नहीं करोगे।

वे पुस्तकें ले गये और जब वापस लौटाने आये, तो उनका मानस निरर्थक चुनावी बहस से काफी सुधर चुका था। मुझे आत्मिक प्रसन्नता हुई और महसूस हुआ कि जहां युवा पीढ़ी की कमी है कि उन्हें आजादी के इतिहास की जानकारी नहीं है, वहीं हमारी पीढ़ी भी कम दोषी नहीं है कि हमने उसे यह अवसर नहीं दिया।

लगभग सौ वर्ष चले भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास के दो मुख्य पड़ाव हैं, पहला 1857 का मुक्ति संग्राम तथा दूसरा 1942 का भारत छोड़ो आन्दोलन। जहां 1857 के मुक्ति संग्राम को नेतृत्व तथा जन संवाद से विहीन कहा जा सकता है, वहीं 1942 के भारत छोड़ो आन्दोलन में भी सुचिन्तित रणनीति का अभाव तो था, लेकिन काल और परिस्थितिजन्य अन्तर तथा जन-मन से जुड़े होने के कारण भारत छोड़ो आन्दोलन अपना देशव्यापी प्रभाव छोड़ने में सफल रहा। क्रान्तिकारी नेता ट्रॉट्स्की का कहना था कि रूस की क्रान्ति में वहां की एक प्रतिशत जनता ने भाग लिया, जबकि इतिहासकारों के अनुसार भारत की भारत छोड़ो आन्दोलन में देश के बीस प्रतिशत लोगों ने भागीदारी की। इससे भारत छोड़ो आन्दोलन की व्यापकता का अन्दाज लगाया जा सकता है।

भारत छोड़ो आन्दोलन, जिसे अगस्त क्रान्ति के नाम से भी जाना जाता है, भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की अन्तिम लड़ाई थी, जिसने ब्रिटिश साम्राज्य की नींव हिलाकर रख दी। इतिहास के कुछ पुराने पन्ने पलटने पर पता चलता है कि इसके विभिन्न कारणों में से एक था—दूसरा विश्व युद्ध, जिसमें दक्षिण-पूर्वी एशियाई देशों में ब्रिटिश सेनाओं की हार और जापान के भारत पर आक्रमण की स्थिति बन गई थी। अमेरिका, रूस और चीन, जो उस समय भारत के मित्र राष्ट्र माने जाते थे, भारतीयों का समर्थन प्राप्त करने के लिए ब्रिटेन पर दबाब बनाने लगे। इसी के चलते ब्रिटेन ने क्रिप्स मिशन को मार्च, 1942 में भारत भेजा। लेकिन जब भारतीय नेताओं को पता चला कि ब्रिटिश सरकार भारत को पूर्ण स्वतंत्रता नहीं देना चाहती और भारत की सुरक्षा तथा गवर्नर जनरल का वीटो अधिकार भी अपने पास रखना चाहती है, तो उन्होंने क्रिप्स मिशन का प्रस्ताव एक स्वर से खारिज कर दिया। क्रिप्स मिशन की असफलता के साथ ही गांधीजी ने कांग्रेस कमेटी की बैठक में अपने नागरिक अवज्ञा आन्दोलन की घोषणा कर दी।

4 जुलाई, 1942 को हुई भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की बैठक में उन्होंने यह प्रस्ताव रखा कि यदि अंग्रेज भारत को पूर्ण स्वतंत्रता देने के लिए तैयार नहीं होते हैं, तो उनके विरुद्ध व्यापक स्तर पर नागरिक अवज्ञा आन्दोलन चलाया जायेगा। यद्यपि कई नेता इस प्रस्ताव के विरोध में थे। राजगोपालचारी ने तो इसके चलते पार्टी ही छोड़ दी थी। नेहरू और मौलाना आजाद के मन में भी कुछ झिझक थी, लेकिन वे बापू के आह्वान को अस्वीकार नहीं कर सके। डॉ. राजेन्द्र प्रसाद तथा कांग्रेस समाजवादी नेता अशोक मेहता और जयप्रकाश नारायण ने इस आन्दोलन का पूर्ण समर्थन किया।

मुस्लिम लीग ने यह कहकर आन्दोलन की आलोचना की कि इसका लक्ष्य भारत में हिन्दू साम्राज्य की स्थापना करना है, इसलिए यह मुसलमानों के लिये घातक है। सर तेज बहादुर सप्रू ने इसे अविचारित तथा अव्यावहारिक कहा, तो भीवराव अम्बेडकर ने इसे अनुत्तरदायित्वपूर्ण और पागलपन भरा कार्य बताया। भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी तथा हिन्दू महासभा ने तो आन्दोलन का खुलकर विरोध किया था।

9 अगस्त की पूर्व संध्या पर गांधी जी ने अपने आह्वान में कहा कि मैं आपको एक छोटा सा मंत्र देता हूं। आप इसे अपने हृदय पटल पर अंकित कर लीजिये और हर सांस के साथ उसका जाप कीजिये। यह मंत्र है- 'करो या मरो'। या तो हम भारत को आजाद करेंगे या आजादी की कोशिश में प्राण दे देंगे। हम अपनी आंखों से अपने देश को सदा गुलाम और परतंत्र नहीं देख सकते। प्रत्येक सच्चा कांग्रेसी, चाहे वह पुरुष हो या स्त्री, इस दृढ़ निश्चय से संघर्ष में शामिल होगा कि वह देश को दासता के बन्धन में बंधा देखने के लिए जिन्दा नहीं रहेगा। ऐसी प्रतिज्ञा होनी चाहिए। उन्होंने कहा कि जो लोग कुर्बानी देना नहीं जानते वे आजादी प्राप्त नहीं कर सकते। एक देश तब तक आजाद नहीं हो सकता जब तक कि उसमें रहने वाले लोग एक-दूसरे पर भरोसा नहीं करते। पट्टाभिसीतारमैया ने 70 मिनट के गांधीजी के इस भाषण को ऐतिहासिक बताते हुए लिखा है कि वास्तव में गांधीजी उस दिन अवतार और पैगम्बर की प्रेरक शक्ति से प्रेरित होकर भाषण दे रहे थे।

गांधी जी के इन शब्दों ने लोगों पर जादू का सा असर किया और देश के कोने-कोने में

लोग जोश के साथ 'करो या मरो' के नारे के साथ आन्दोलन में कूद पड़े। भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन के इतिहास का सम्भवतः यह पहला आन्दोलन था, तो नेतृत्वविहीनता के बावजूद इतना व्यापक और प्रभावशाली था।

भारत छोड़ो आन्दोलन का विश्वव्यापी असर पड़ा, जो तत्कालीन ब्रिटिश साम्राज्य की कल्पना से परे था। विश्व के अनेक देश इस आन्दोलन के परिणामस्वरूप भारत के पक्ष में खड़े हो गये, जिनमें चीन और अमेरिका उल्लेखनीय हैं। चीन के तत्कालीन मार्शल च्यांग काई शेक ने 25 जुलाई, 1942 को अमेरिकी राष्ट्रपति को एक पत्र में लिखा कि अंग्रेजों के लिए श्रेष्ठ नीति यह होगी कि वे भारत को पूर्ण स्वतंत्रता दे दें। रूजवेल्ट ने भी इसका समर्थन किया। इससे ब्रिटिश सरकार को यह अहसास हो गया था कि उसने भारत पर शासन का वैध अधिकार खो दिया है।

इस देशव्यापी आन्दोलन में व्यापक स्तर पर जनता ने हिस्सा लिया और दृढ़ साहस तथा सहनशीलता का परिचय दिया। 9 अगस्त को कांग्रेस के प्रथम पंक्ति के नेताओं की गिरफ्तारी के कारण आन्दोलन की ठोस योजना नहीं बन पाई, लेकिन जनता ने गांधी जी के आह्वान को आत्मसात कर आन्दोलन को अपने हाथ में ले लिया था। कांग्रेस के अन्दर बने युवा समाजवादी समूह के नेताओं—जयप्रकाश नारायण, राम मनोहर लोहिया, अरुणा आसफ अली आदि ने अत्यन्त सक्रिय क्रान्तिकारी भूमिका का निर्वाह किया। जे.पी. ने भूमिगत रहते हुए 'आजादी के सैनिकों के नाम' पत्र लिखे, जिनसे एक तरफ तो युवा क्रान्तिकारियों का उत्साहवर्द्धन हुआ, दूसरी तरफ जो तत्व अंग्रेजी शासन को भारत की नियति मानते हुए आन्दोलन का विरोध कर रहे थे, उनका भी पर्दाफाश हुआ।

भारत छोड़ो आन्दोलन का एक महत्वपूर्ण पक्ष यह था कि गांधी जी के नेतृत्व में हुए विभिन्न अहिंसक आन्दोलनों में जो जन भागीदारी बढ़ी, उससे लोगों में आजादी प्राप्त करने की इच्छाशक्ति बलवती हुई तथा उसका अन्तिम और व्यापक प्रदर्शन भारत छोड़ो आन्दोलन के दौरान हुआ। इस आन्दोलन ने यह भी साबित किया कि भले ही आजादी की इच्छा गांधी जी के प्रभावशाली नेतृत्व ने पैदा की लेकिन आजादी प्राप्त करने की निर्णायक शक्ति जनता में ही निहित थी।

विश्लेषण करने पर यह ऐतिहासिक तथ्य सामने आता है कि गांधी जी ने प्रायः दो दशकों के संघर्ष के अपने अनुभव का भारत छोड़ो आन्दोलन में बहुत ही कुशलतापूर्वक उपयोग किया था। रणनीतिक दृष्टि से आन्दोलन को सर्वग्राही बनाने के लिए उन्होंने अपने आह्वान में समाज के सभी वर्गों, देश के जन साधारण, सरकारी अधिकारी-कर्मचारी, नरेशों-सामन्तों, विद्यार्थियों, सैनिकों तथा अंग्रेजों और मित्र राष्ट्रों, विशेषकर यूरोप के नेताओं को भी सम्बोधित किया था। इसके परिणामस्वरूप लोगों के मन में पल रही आजादी की इच्छा का चरमोत्कर्ष देखने को मिला, जिससे सामन्ती सोच वालों तथा आन्दोलन का विरोध करने वालों को भी यह लगने लगा था कि अब अंग्रेजों को जाना पड़ेगा।

लेकिन आजादी के बाद जो शासन प्रणाली और प्रशासनिक ढांचा शासक वर्ग ने अपनाया, वह भारत छोड़ो आन्दोलन के उद्वेग के कतई अनुरूप नहीं था। वर्तमान शासन अंग्रेजी राज का ही विस्तार है। शोषण, बेरोजगारी, अशिक्षा और अभावों के मलबे से जिस नई राजनीति और नवोन्मेष की अपेक्षा थी, वह धूल धूसरित हो गई। यहां तक कि जो संविधान बना, वह भी सामन्तवाद और पूंजीवाद की छाया से बच नहीं पाया। आन्दोलन को शीर्ष नेतृत्व देने वाले गांधी ने जिस सादगीपूर्ण जीवन को उत्तुंगतम गरिमा प्रदान की, उसे भी भुला दिया गया। साबरमती और सेवाग्राम की मिट्टी, छप्परों और पेड़ों की छांव में बैठकर गांधी का जो दर्शन सृजित हुआ, जहां अनेक कष्ट सहकर देश-दुनिया के राजनेता, सेठ-साहूकार, राजे-रजवाड़े नतमस्तक होकर आते रहे, उसकी राह को ही बिसरा दिया गया।

स्वतंत्र भारत की राजनीति और शासन प्रणाली का भारत छोड़ो के प्रमुख सेनानी जयप्रकाश नारायण तथा राममनोहर लोहिया ने अपने ढंग से आलोचनात्मक विवेचन किया है। यहां आन्दोलन की पच्चीसवीं जयन्ती पर डॉ. राम मनोहर लोहिया द्वारा की गई टिप्पणी समीचीन लगती है। उन्होंने कहा था कि 15 अगस्त मनाने में हम बड़े उत्साहित होते हैं, क्योंकि उस दिन हमें सत्ता की बागडोर मिली थी, लेकिन जो 9 अगस्त हमारी आजादी के इतिहास की महत्वपूर्ण घटना थी, जिसमें करोड़ों देशवासियों ने आजादी प्राप्त करने के अपने संकल्प की अभिव्यक्ति की थी, उसे हम भुला देते हैं।

उन्होंने 26 जनवरी और 9 अगस्त को देश के लिए महत्वपूर्ण बताते हुए कहा कि ये दोनों घटनाएं हमारे स्वतंत्रता संग्राम की अभूतपूर्व घटनाएं हैं, एक पर हमने आजादी की इच्छा व्यक्त की और दूसरे पर आजादी प्राप्त करने का संकल्प व्यक्त किया। डॉ. लोहिया का कहना था कि 9 अगस्त की पचासवीं वर्षगांठ इस प्रकार मनाई जायेगी कि 15 अगस्त भी भूल जायेगा।

यद्यपि लोहिया पचासवीं वर्षगांठ देखने के लिए जीवित नहीं रहे, लेकिन भारत छोड़ो आन्दोलन की पचासवीं वर्षगांठ वाला 1992 का वर्ष इतिहास में कुछ काले पृष्ठ जरूर जोड़कर चला गया, जिन्हें आने वाली पीढ़िया भुगतेंगी। इनमें दो थे- देश के दरवाजे बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की लूट के लिए खोल दिये गये तथा राम मन्दिर के नाम पर पांच सौ वर्ष पुरानी मस्जिद के ढांचे को गिरा दिया गया।

आज समूचा देश, धार्मिक-साम्प्रदायिक उन्माद, मोब लिंचिंग (भीड़ द्वारा सुनियोजित ढंग से न्यायेतर हत्या) तथा शासक वर्ग द्वारा मौन रहकर उसे प्रोत्साहित करने की घटनाओं से झुलस रहा है। शासकों का दर्प लोकतांत्रिक प्रणाली को कुचलने पर आमादा है। पूंजीवाद और बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के जाल से घिरा तथा जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं से जूझ रहा मध्यम वर्ग इस खतरे की तरफ से आंख मूंदे हुए है। वह देश को काल्पनिक विदेशी आक्रमण से हिन्दुत्व की रक्षा का दायित्व सम्भालने में कथित सक्षम लोगों को नेतृत्व सौंप कर निश्चिन्त हो गया है। लेकिन जब उसकी यह मूर्च्छा टूटेगी और खतरनाक सच्चाई सामने आयेगी, तब तक बहुत देर हो चुकेगी।

अगस्त क्रान्ति की यही चुनौती है कि साम्प्रदायिक तथा फासीवादी सोच के प्रतिनिधि शासक वर्ग तथा बहुराष्ट्रीय संस्थानों के षड्यंत्र से नई पीढ़ी को कैसे सचेत किया जाय। ❑

कितने वीरानों से गुजरे, तब ये जन्नत पायी है!

❑ डॉ. अवध प्रसाद

अंग्रेजों भारत छोड़ो का प्रस्ताव 8 अगस्त 1942 को मुम्बई में स्वीकार किया गया और 9 अगस्त 1942 से पूरे देश में फैल गया। इस आंदोलन को हिंसक आंदोलन कहना संभवतः उचित नहीं है। लेकिन इसका स्वरूप पूरे देश में एक जैसा नहीं था, यह कह सकते हैं। जेल जाने, अहिंसक दबाव बनाने, सामान्य जन में अंग्रेजी राज की समाप्ति का वातावरण बनाने और सत्याग्रह आदि कार्यक्रमों से अंग्रेजी राज को यह विश्वास हो गया था कि अब भारत पर शासन करना संभव नहीं है। जयप्रकाश नारायण एवं उनकी टीम ने तो जेल से निकल कर जनमानस को आंदोलित किया। कह सकते हैं कि भारत छोड़ो आंदोलन के विविध रूप थे। इसका सकारात्मक परिणाम यह हुआ कि अंग्रेजी राज से मुक्ति कैसे मिले, इस पर गहन चिन्तन प्रारंभ हो गया। यह चिन्तन मुख्यतः दो स्तर पर हुआ—(क) ब्रिटिश साम्राज्य द्वारा—भारत एवं ब्रिटेन की संसद में (ख) और भारत में राष्ट्रीय स्तर के नेताओं द्वारा। एक तरफ जब देसी रियासतों को देश में मिलाने का काम चल रहा था, तो दूसरी तरफ देश विभाजन की स्थिति सामने थी, जिसमें लाखों लोग हिंसा के शिकार हुए, विस्थापित हुए और पूरे देश में 'हिन्दू-मुस्लिम' के बीच की दूरी गहरी हो गयी। स्वतंत्रता के जश्न के समय लंबे समय तक गांधीजी को नोआखाली में शांति कायम करने के लिए रहना पड़ा। हिंसक गतिविधियों को समाप्त करने के लिए दिल्ली में उपवास भी करना पड़ा—यह उनके जीवन का अंतिम उपवास बन गया। अंग्रेज तो भारत छोड़ गये लेकिन हमने गांधीजी के शरीर को समाप्त कर दिया—राम नाम लेते हुए गांधी राम के पास चले गये—शहीद हो गये। कह सकते हैं कि हमें राजपाट का सुख भोगने का अवसर देकर वे स्वयं उससे मुक्त हो गये।

अंग्रेजों भारत छोड़ो का वास्तविक अर्थ एवं स्वरूप क्या था? क्या केवल इतना ही था कि अंग्रेज भारत से चले जायें या वे हमें राजा बना दें? क्या गांधीजी के चिन्तन में अंग्रेजों के भारत से जाने भर की सोच थी? इस पर विचार किये बिना 'अंग्रेजों भारत छोड़ो' का नारा अधूरा रह जाता है। गांधीजी की 3-4 पुस्तकें गंभीरता से पढ़नी चाहिए—आत्मकथा अर्थात सत्य के प्रयोग, हिन्द स्वराज, सर्वोदय, मेरे सपनों का भारत आदि। इसके अतिरिक्त छोटी-छोटी कई और उत्तम पुस्तकें हैं, जैसे मंगल प्रभात, रचनात्मक कार्यक्रम, गीता माता आदि। इन पुस्तकों को आधार मानकर तटस्थ भाव से चिन्तन करना होगा कि हम किधर जा रहे हैं? क्या इस रास्ते पर चलने से व्यक्ति के शरीर और मन का संतुलित विकास होगा? गांधीजी ने जो 'सत्य के प्रयोग' किये वह चिन्तन का विषय है। गांधीजी ने एक से अधिक बार कहा कि हम अंग्रेजों से नहीं, अंग्रेजी चिन्तन से मुक्ति के मार्ग की खोज में हैं। अंग्रेज भले भारत में रहें पर हमें अंग्रेजियत से मुक्ति पानी होगी। हमने इसे उल्टा समझा, उल्टा किया कि अंग्रेज जायें और हम अंग्रेजियत अपना लें। आजादी के बाद यही हुआ, अंग्रेज अपने देश चले गये और हमने उनकी अंग्रेजियत को उसी रूप में अपना लिया। इस प्रकार हम गांधीजी से और उनके विचार से मुक्त हो गये।

एक विचारणीय मुद्दा यह भी है कि गांधी के उस वाक्य में हमारा कितना विश्वास है जिसमें उन्होंने कहा था, 'अंग्रेज भले ही भारत में रहें परंतु अंग्रेजियत नहीं रहे।'' अर्थात पाश्चात्य समाज रचना से केवल भारत ही नहीं, बल्कि पूरा विश्व मुक्त हो जाये। इसी बात को आचार्य विनोबा भावे ने अध्यात्म और विज्ञान की सोच को स्वीकारने के तौर पर कहा और 'जयजगत' के रूप में समाज रचना का विचार रखा। जयप्रकाश नारायण ने इसे 'संपूर्ण क्रांति' कहा। प्रो. जे. सी. कुमारप्पा ने 'स्थाई समाज व्यवस्था' को व्यावहारिक रूप देने के लिए अर्थशास्त्र के विचार को नयी दिशा दी। आज भी भारत ही नहीं, पूरे विश्व में वर्तमान परिस्थिति को देखते हुए 'वैकल्पिक व्यवस्था' की खोज, प्रयोग एवं प्रसार के प्रयत्न किये जा रहे हैं। आप कहेंगे, इन प्रयोगों का क्या अर्थ जबकि उसे स्वीकारा ही नहीं गया। प्रश्न उचित है, गांधी, विनोबा, कुमारप्पा, बुद्ध, स्वामी विवेकानंद आदि अनेक महापुरुषों ने, महर्षि अरविन्द ने भी, विकल्प प्रस्तुत किये ओर हमने प्रारंभ में 'स्वहित' के लिए उसे मान लिया, फिर उससे मुक्ति पा ली।

हम 15 अगस्त, 1947 को राजनैतिक रूप से स्वतंत्र हुए—लेकिन राजनैतिक व्यवस्था में गांधी नहीं रहे। गांधी ने भी मान लिया कि ये लोग अपने ही रास्ते जायेंगे जो हमारे रास्ते से भिन्न है।

आजादी के बाद सरकार ने 'समाजवाद' की व्यवस्था को स्वीकार किया—कुछ ने इसे मिश्रित व्यवस्था भी कहा, परंतु विचार तो समाजवाद का ही रहा। उन दिनों इसी का प्रभाव था। गांधी को समर्पित उद्योगपति घनश्यामदास बिड़ला से किसी ने पूछा कि ''नेहरू जी समाजवाद की बात करते हैं और गांधीजी ने आपको ट्रस्टीशिप का विचार दिया। समाजवाद में आपका उद्योग समाज का हो जायेगा।'' बिड़ला जी कुछ देर चुप रहे। उनका उत्तर था कि नेहरूजी का समाजवाद हमारे हित में है। कैसे? उत्तर था कि उद्योग में 10 रुपये हमारा, 90 रुपये समाज का (शेयर के रूप में) और मालिक हम। इस प्रकार उद्योग-व्यवसाय के लिए समाजवाद अनुकूल है, अतः उद्योग-व्यवसाय से गांधी विचार को, गांधी को मुक्त कर दिया गया।

9 अगस्त 1942 को 'अंग्रेजों भारत छोड़ो'' की सफलता के बाद भारत ही नहीं, बल्कि पूरा विश्व किस मार्ग पर जा रहा है, उसे याद करने की जरूरत है। हम चांद पर पहुंच गये, आसमान पर कब्जा कर रहे हैं, उत्तम तकनीकों का निर्माण कर चुके हैं, कर रहे हैं। मनुष्य मात्र को, प्रकृति को समाप्त करने के अस्त्र-शस्त्र बना लिये गये हैं अर्थात धरती, धरती के नीचे और आसमान सबको समाप्त करने और प्रदूषित करने की खोज मनुष्य ने कर ली है। इसे विकास कहा गया। हम चाहें तो अणु शक्ति से एक से अधिक बार जीवन को समाप्त कर सकते हैं—मानव ही नहीं, जीव मात्र से मुक्ति मिल सकती है—यह आज के विकास का पैमाना है, जिसे शासन तंत्र का समर्थन भी हासिल है।

ऐसे सैकड़ों प्रश्न हैं जिनका उत्तर हमारे पास नहीं है। जिन्हें याद है, वे कहते हैं कि अंग्रेजों भारत छोड़ो का क्या हुआ? वे तो (अंग्रेज) चले गये, हमे अपने जैसा बना गये। हम ''अंग्रेजों भारत छोड़ो'' नारे को तो याद रखते हैं, परंतु बापू की इस बात को याद करना भूल जाते हैं कि अंग्रेजियत की संस्कृति और अंग्रेजी मॉडल को कैसे छोड़ें। यही आधुनिक सभ्यता की व्यथा है। दुख है कि यह बढ़ती ही जा रही है। यह व्यथा मानव सभ्यता को समाप्ति की ओर ले जा रही है। इससे बचना है तो व्यथा के विकल्प के रास्ते पर चलना होगा। ❑

अगस्त क्रांति दिवस

जब गांधी की भाषा अग्नि में पड़े कुंदन की तरह दमक उठी थी

❑ अव्यक्त

1942 के उस दौर में गांधी पर तीखे से तीखे वैचारिक हमले हुए, लेकिन तब इसी अनुपात में वे सधी हुई राजनीतिक भाषा से सबको साधते हुए आगे बढ़ रहे थे। 1942 को राजनीतिक भाषा के शानदार प्रयोग के लिए भी फिर से पढ़ा जाना चाहिए. खुद गांधी की भाषा इस समय अग्नि में पड़े कुंदन की तरह दमक उठी थी।

1942 में गांधी ही सबकी अपेक्षाओं के केंद्र में थे और यही कारण था कि वे सबके निशाने पर भी थे. उन्हें बार-बार अपने ही लोगों को स्पष्टीकरण देने की स्थितियां पैदा हो रही थीं. इस दौरान वे भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, इसके अलग-अलग धड़ों, हिन्दू महासभा, मुस्लिम लीग, कम्युनिस्ट, ब्रिटिश सरकार, ब्रिटिश और अमेरिकी अखबारों, युद्धरत मित्र-राष्ट्रों और यहां तक कि धुरी-राष्ट्रों तक को संबोधित करने का प्रयास करते हैं.

अपने विरोधियों को धैर्यपूर्वक सुनना, उनके विरोध को मान्यता देना, उनके हृदय परिवर्तन के लिए मैत्रीपूर्ण संवाद को एकमात्र रास्ता मानना, निराशा को अपने ऊपर हावी न होने देना, आरोपों से घबराकर सत्यमार्ग से न डिगना, अहिंसा का दामन कभी न छोड़ना, इन सारी कसौटियों पर गांधी इस दौरान कसे जाते रहे और खरे उतरते रहे.

ब्रिटिश हुकूमत के खिलाफ एक बड़े आंदोलन की पृष्ठभूमि तैयार हो चुकी थी. हालांकि अलग-अलग पक्षों में खींचतान जारी थी. इसी बीच किसी ने गांधीजी को पत्र लिखा कि 'आपके और नीरो के बीच फर्क क्या है? जब रोम जल रहा था, वह सारंगी बजा रहा था. आप भी क्या देश में आग लगाकर — जो आपसे बुझेगी नहीं—सेवाग्राम में बैठे सारंगी बजाएंगे?

12 जुलाई, 1942 को 'हरिजन' में गांधीजी ने इस पत्र को छापते हुए इसके जवाब में लिखा- 'अगर मुझे दियासलाई लगानी ही पड़ी, और वह 'सीलीतीली' न साबित हुई, तो मेरे और नीरो के बीच का फर्क मालूम हो जाएगा. अगर मैं अपने हाथों जलाई ज्वालाओं पर काबू न रख सका, तो आप मुझे सेवाग्राम में सारंगी बजाते देखने के बदले उनमें जलते देखने की आशा रख सकते हैं. लेकिन मुझे आपसे एक शिकायत है. एक ऐसे कर्ज को चुकाने के लिए, जो बहुत पहले चुका दिया जाना चाहिए था—और सो भी ऐसे वक्त में जब उसे चुकाकर ही मैं जिंदा रह सकता हूं— यदि मैं कोई कार्रवाई करूं तो उसके फलस्वरूप जो कुछ भी हो, उस सबका दोष आप मेरे मत्थे ही क्यों मढ़ते हैं?'

'स्कूलों में हमारे शासक हमारे बच्चों से गाना गवाते हैं—'अंग्रेज कभी गुलाम नहीं बनेंगे.' लेकिन उनके गुलाम किस उमंग से इस गीत को गाएं? आज अंग्रेज अपनी आजादी की हिफाजत के लिए पानी की तरह खून बहा रहे हैं और मिट्टी की तरह सोना लुटा रहे हैं. क्या उन्हें हिन्दुस्तान और अफ्रीका को गुलाम बनाने का अधिकार है? अपनी इन बेड़ियों को तोड़ने के लिए हिन्दुस्तान की जनता अंग्रेजों से कम कोशिश क्यों करे? जो आदमी जिंदा ही मर रहा है और अपने दिल की आग को बुझाने के लिए अपनी ही चिता सुलगाता है, उसके कार्य की तुलना नीरो के कार्य के साथ करना भाषा का दुरुपयोग है.' राजनीति में मुहावरों के सतही दुरुपयोग और भाषा की सारी मर्यादा त्यागे जाने के दौर में भाषा के प्रति गांधीजी की यह चेतावनी क्या हम आज फिर से सुनना-समझना चाहेंगे?

1942 के आंदोलन के शुरू होने से ठीक पहले मुस्लिम लीग के किसी कार्यकर्ता ने गांधीजी को पत्र लिखकर पूछा कि 'मुसलमानों के साथ समझौता करने से पहले आप आजादी के लिए देशव्यापी आंदोलन शुरू करने की बात सोच कैसे सकते हैं?' 12 जुलाई, 1942 को हरिजन में इस सवाल का जवाब देते हुए गांधी कहते हैं- 'मेरे आलोचक कहते हैं कि 'पाकिस्तान दे दो.' मैं कहता हूं- 'वह मेरे हाथ में नहीं है.' अगर मुझे इस मांग के औचित्य का विश्वास हो जाए तो मैं निश्चय ही लीग के साथ मिलकर उसके लिए मेहनत करूं. लेकिन वही तो हो नहीं रहा है. मैं चाहता हूं कि कोई मुझे विश्वास करा दे. अभी तक किसी ने मुझे उसके सभी फलितार्थ नहीं बताए हैं. पाकिस्तान-विरोधी पत्रों में जो बताए भी जाते हैं, उनकी तो कल्पना करते भी डर लगता है. लेकिन मैं पाकिस्तान की मांग को उसके विरोधियों की नजर से नहीं समझना चाहता. उसके हिमायती ही बता सकते हैं कि वे क्या चाहते हैं और उनका आशय क्या है'.

अपने इस लेख में उन्होंने यह भी कहा था कि 'मुझे विश्वास है कि जिस हिन्दुस्तान को अंग्रेज तीन सौ वर्षों से मजे से लूटते चले आ रहे हैं, उसे छोड़ने की ब्रिटिश अनिच्छा के सिवा हिन्दुस्तान की आजादी के मार्ग में और कोई रुकावट नहीं है.'

यह एक बड़ा प्रश्न था कि यदि अंग्रेज 1942 में ही तत्क्षण भारत छोड़कर चले जाएं, तो जापान या धुरी-राष्ट्रों के साथ अवश्यंभावी युद्ध के प्रति भारत का रवैया क्या होगा? ब्रिटिश और अमेरिकी अखबारों ने इस बारे में गांधीजी के अहिंसावादी सिद्धांत और कांग्रेस के विरोधाभासी रवैये पर लगातार कटाक्ष करने शुरू कर दिए थे. 'मैनचेस्टर गार्जियन' अखबार द्वारा अपने संपादकीय में उठाए गए ऐसे ही प्रश्न पर अपनी स्थिति स्पष्ट करते हुए गांधी ने अपने उसी आत्मविश्वास, सुस्पष्टता और सधी हुई भाषा का परिचय दिया था.

2 अगस्त, 1942 को वह लिखते हैं- 'कांग्रेस अहिंसा को धर्म के रूप में नहीं मानती. जैसा कि 'मैंचेस्टर गार्जियन' ने ठीक ही कहा है, इस मामले में मैं जिस चरम सीमा तक जाता हूं, वहां तक बहुत थोड़े ही लोग जाते हैं. मौलाना आजाद और पंडित नेहरू सशस्त्र प्रतिरोध करने में विश्वास रखते हैं. और मैं इसमें यह और जोड़ दूं कि बहुतेरे कांग्रेसजन भी रखते हैं. इसलिए, समूचे देश में कहिए या कांग्रेस में कहिए, मेरे साथ तो बहुत ही थोड़े लोग होंगे. लेकिन, जहां तक मेरा संबंध है, मैं यदि सिर्फ अकेला भी रह जाऊं तो भी मेरा मार्ग तो स्पष्ट ही है...'

'...यह मेरी अहिंसा की परीक्षा का समय है. मुझे आशा है कि मैं इस अग्नि-परीक्षा से अछूता बाहर आ सकूंगा. अहिंसा की प्रभावकारिता में मेरी श्रद्धा अटल है. अगर मैं हिन्दुस्तान, ब्रिटेन, अमेरिका और धुरी-राष्ट्रों सहित सारी दुनिया को अहिंसा की दिशा में मोड़ सकूं तो जरूर ही मोड़ना चाहूंगा. लेकिन अकेले मानवीय पुरुषार्थ से यह चमत्कार हो नहीं सकता. यह तो भगवान के हाथ की बात है. मेरा काम तो 'करना या मरना' है. निश्चय ही 'मैंचेस्टर गार्जियन' इस सच्ची चीज से—शुद्ध अहिंसा से—नहीं डरता. इससे कोई भी नहीं डरता. न डरने की जरूरत है.'

सात अगस्त को भारत छोड़ो आंदोलन के प्रस्ताव पर विचार के लिए हुई अखिल भारतीय कांग्रेस कमिटी की बैठक में गांधीजी ने कहा कि 'स्वतंत्रता प्राप्त करके ही आपका काम खत्म नहीं हो जाएगा. हमारी कार्ययोजना में तानाशाहों के लिए कोई जगह नहीं है. संभव है सत्ता उन्हें सौंपी जाए जिनके नाम कांग्रेस में कभी सुने न गए हों. यह फैसला करना लोगों का काम होगा. आपको यह नहीं सोचना चाहिए कि संघर्ष करने वालों में अधिक संख्या हिन्दुओं की थी और मुसलमानों और पारसियों की संख्या कम थी. ...यदि आपके मन में लेशमात्र भी सांप्रदायिकता की छाप है तो आपको संघर्ष से दूर रहना चाहिए.'

'...अगर आप सच्ची आजादी पाना चाहते हैं तो आपको मेल-जोल पैदा करना होगा. ऐसे मेल-जोल से ही सच्चा लोकतंत्र पैदा होगा— ऐसा लोकतंत्र जैसा कि पहले देखने में नहीं आया और न ही जिसके लिए पहले कभी कोशिश ही की गई. ...मेरे लोकतंत्र का मतलब है कि हर व्यक्ति अपना मालिक खुद हो. ...कुछ लोग शायद कहें कि मैं खयालों की दुनिया में रहता हूं. परंतु मैं आपसे कहता हूं कि मैं असली बनिया हूं और मेरा धन्धा स्वराज्य प्राप्त करना है. एक व्यवहार-कुशल बनिये के रूप में मेरा कहना है कि यदि आप (अहिंसात्मक आचरण की) पूरी कीमत चुकाने को तैयार हों. तो इस प्रस्ताव को पास कीजिए, अन्यथा इसे पास मत कीजिए.'

एक तरफ जहां अन्य पक्षों की भाषा उत्तेजक और हिंसक हो, वहां उसका जवाब किस तरह अहिंसक और विनोदपूर्ण लेकिन सारगर्भित भाषा में दिया जा सकता है, वह गांधी जी की भाषा में देखने को मिलता है. लेकिन यह कोई भाषा की कारीगरी मात्र नहीं थी. यह उनके जीवन-दर्शन और लंबी साधना से उपजे राजनीतिक आत्मविश्वास और आध्यात्मिक करुणा का फल था. ❑

भारत! भारत छोड़ो

❑ उमेश प्रसाद सिंह

अंग्रेज भारत में भारत का भाग्य संवारने नहीं आये थे। वे भी भारत को लूटने ही आये थे। वे लुटेरों से भिन्न नहीं थे। मगर भिन्न दिखने की कोई कोशिश उन्होंने छोड़ी नहीं। अपने को लुटेरों से भिन्न दिखाने में वे सफल भी रहे। उनके पास अपने को औरों से श्रेष्ठ और अलग दिखाने की जो सबसे प्रभावकारी चीज थी, वह आधुनिकता थी। लुटेरी, बर्बर और मनुष्य विरोधी आधुनिक सभ्यता का जो आतंक अंग्रेजों ने भारतीय जाति पर कायम किया, वह उनके जाने के बाद भी हमारे देश से नहीं गया।

जब सन् उन्नीस सौ बयालिस में महात्मा गांधी ने 'अंग्रेजों भारत छोड़ो' का नारा उठाया तो उनके सामने भारत जीवित और जीवंत था। भारत की पहचान उनकी दृष्टि में बिल्कुल साफ थी। उन्होंने सिर्फ अंग्रेजों को भारत छोड़कर जाने को नहीं कहा बल्कि अंग्रेजों को उनकी आधुनिक सभ्यता को अपने साथ लेकर जाने को कहा। वैसा हो नहीं सका। अंग्रेज तो जरूर चले गये मगर उन्होंने अपनी सभ्यता यहीं छोड़ दी। उनकी सभ्यता यहीं रह गई तो उनके जाने का कोई मतलब नहीं निकला। उन्होंने लूट की मनोवृत्ति यहीं छोड़ दी। लूट को लूट की संज्ञा से बचाये रखने के तौर-तरीके उन्होंने यहीं छोड़ दिये। लूट की समृद्धि को सम्मान की दृष्टि से देखने का संस्कार उन्होंने यहीं छोड़ दिया। मनुष्य विरोधी सभ्यता के सारे कुकृत्यों के गरिमामंडन का सारा विधान उन्होंने यहीं छोड़ दिया। अंग्रेज तो चले गये लेकिन अपने दमन के सारे हथियार उन्होंने यहीं छोड़ दिये। अब वे नहीं हैं। मगर उनके सारे हथियार अब भी हैं। उनके हथियार अब हमारे ही लोग अपने ही बहुसंख्यक लोगों के खिलाफ चला रहे हैं। भारतीय लोकतंत्र में भारतीय जनता अंग्रेजी हथियार से बराबर आहत होती रहती है। चोट सहते-सहते उसकी आंखों की रोशनी और कंठ की आवाज तक गायब हो चुकी है।

जब गांधी ने अंग्रेजों से भारत छोड़ने के लिए कहा था तब भारत में भारत पूरा-पूरा और पूरी तरह मौजूद था। उसकी आंखों में रोशनी थी और कंठ में आवाज थी। वह अपनी बदहाली में भी पुकार रहा था। वह वंदेमातरम् गा रहा था। उसकी पुकार गांधी सुन रहे थे। गांधी के भीतर से सिर्फ गांधी नहीं पूरा भारत बोल रहा था। पूरे भारत के बोलने से ही अंग्रेजों का आसन डोल रहा था। 'हिन्द स्वराज' की प्रस्तावना में गांधी का चिन्तन नहीं, हिन्द की आत्मा की पुकार गूंज उठी थी। उनकी वाणी में भारत की गरिमा का गान और उसकी विडम्बनाओं की चीख साथ-साथ और साफ-साफ ध्वनित है। अंग्रेजों की प्रवर्तित आधुनिक सभ्यता की निःसंकोच भर्त्सना में गांधी को कभी भी तनिक भी हिचक नहीं हुई। उन्होंने जिस तत्परता से उनकी न्याय प्रणाली, शिक्षा व्यवस्था और शासन प्रणाली में व्याप्त दिखावे की नकली उदारता और बनावटी लोकतांत्रिकता पर कठोर प्रहार किया, स्वतंत्र भारत में पता नहीं कैसे वही सब हमारा आदर्श बन गया और अनुसरण होने लगा। हमारी अपनी व्यवस्था में सब उन्नति के मूल में निज भाषा उन्नति की प्रतिष्ठा अभी नहीं हो पायी। बड़ी वेदनामय सच्चाई है कि स्वतंत्र भारत में भारत के स्वत्व की प्रतिष्ठा के लिए हमारे नेतृत्व में निष्ठा का अभाव बना रहा।

हमने बहुत कुछ किया, बहुत कुछ कर रहे हैं, मगर उसमें भारत के लिए कितना है? हमारा विकास आगे बढ़ता गया। भारत पीछे छूटता गया। फिर हमने विकास शुरू किया। हमारे विकास के केवल पैर थे। आंख नहीं थी। वह बढ़ा। खूब बढ़ा। आगे बढ़ता गया। वह भारत को रौंदता बढ़ता गया।

हमने सरकारी संस्थान बनाये, हमारे समाज से सहकारिता चली गयी। हमने पंचायती प्रणाली लागू की, हमारे गांवों से साझीदारी चली गयी। पारस्परिकता का बस्ती-बस्ती से पलायन हो गया। अब हमारे आसपास पड़ोस और पड़ोसी नहीं हैं। न कोई किसी का मित्र, न शत्रु है। अजीब समय है। हर कहीं आदमी अकेला है। असहाय है। हमारी रोजमर्रा की सारी जरूरतें किसी न किसी कम्पनी के हवाले कर दी गयी है। सारी आबादी को उपभोक्ता में बदलने में हमारी व्यवस्था हलकान है। सभी कुछ को निजी लाभ में बदलने का प्रकाण्ड पराक्रम व्यवस्था का एकमात्र मकसद रह गया है। हमारा सारा विकास सार्वजनिक को व्यक्तिगत में बदलने का विकास बनकर रह गया है। कैसा विडम्बनाग्रस्त है हमारा लोकतंत्र! फिर भी है। हमारी आजादी की समूची विरासत हमारे देखते-देखते दुर्भाग्य की भयानक विरासत में तब्दील हो चुकी है। हमारी व्यवस्था की जुबान इतनी बदचलन हो गई है कि वह भारत को ही भारत छोड़ने का फरमान जारी कर रही है। भला न्यू इंडिया बनाने के पुरजोर अभियान में भारत रहे भी कहां?

हमारी आजादी न जाने कैसी विडम्बनाग्रस्त आजादी है कि आजाद होते ही एक भारतवासी ने गांधी की दैहिक सत्ता को भारत से विदा कर दिया। फिर धीरे-धीरे करके गांधी की वैचारिक अस्मिता को भारत से बहिष्कृत किया जाता रहा। दरअसल भारत से गांधी की विदाई वास्तव में भारत से भारत को विदा करने का अभियान रहा है।

हम विकास की जिस अवधारणा से अनुप्रेरित होकर चल रहे हैं, वह भारत की पहचान को मिटाने वाला है। हम जिस न्याय व्यवस्था के पोषक हैं, वह भयानक रूप से शोषण पर आधारित है। वह संवैधानिक गंतव्यों के घोर विरुद्ध है। हम जिस शिक्षा व्यवस्था का प्रसार कर रहे हैं, वह आदमी को कमजोर, स्वार्थी और राष्ट्रविरोधी बनाने वाली है। हमारी शिक्षा हमें याचक बनने को अभिशप्त बना रही है। हमारी कृषि व्यवस्था किसानों को आत्महत्या की मंजिल की तरफ ठेल रही है। समूची सार्वजनिक जिन्दगी को कुछ घरानों के मुनाफे के लिए गिरवी रख देने का लज्जाजनक उद्योग अब गर्व और गुमान का विषय बन गया है।

हमारी व्यवस्था में अमानुषिक, आधुनिक सभ्यता की विद्रूपता सीना तानकर भारत को गुरेर रही है। वह भारत में न्यू इंडिया के निर्माण के सपने को लांच कर रही है। इसके मायने क्या भारतीय जाति के लोगों को अब भी समझाने की जरूरत बची रह गई है, बिल्कुल नहीं।

आज गांधी के भारत में भारत! भारत छोड़ो का नारा गूंज रहा है। हम सब भारतवासी विकल्पहीनता की दुहाई देकर नारा सुन रहे हैं। सुन-सुन कर तालियां बजा रहे हैं।

गांधी ने जिस सनातन भारतीयता को पहचाना था, वह राष्ट्रीयता से भी अधिक मूल्यवान चीज है। वैश्विक मानव हितों को पोषित करने वाली गांधी की आत्मनिर्भर भारतीयता वैश्विक राष्ट्रीयता की स्पृहणीय मिसाल है। जयशंकर प्रसाद ने उसी भारतीय अस्मिता की गरिमा का गान अपने प्रसिद्ध गीत में किया है—*अरुण यह मधुमय देश हमारा, जहां पहुंच अनजान क्षितिज को मिलता एक सहारा...।*

अनजान क्षितिज को सहारा देने वाली अपनी पहचान को कायम रखने के लिए हमारा चिन्तित होना समय की सबसे बड़ी जरूरत है। ❑

14 अगस्त 1947 की रात का ऐतिहासिक भाषण

जब तक एक भी आंख में आंसू है, हमारा काम खत्म नहीं होता

❑ जवाहरलाल नेहरू

14 अगस्त 1947 की रात को जब दुनिया के अनेक हिस्सों में लोग नींद में डूबे हुए थे, उस समय भारत में जश्न का माहौल था। लोगों की आंखों में न नींद थी और न कोई आलस। देश को अंग्रेजी हुकूमत से आजादी मिलने की खुशी ऐसी थी कि सबकी आंखों में सिर्फ आने वाले भारत के सपने तैर रहे थे। ऐसे माहौल में देश के पहले प्रधानमंत्री स्वर्गीय पंडित जवाहर लाल नेहरू ने आजादी का पहला भाषण दिया था। इस भाषण को 'ए ट्रिस्ट विद डेस्टिनी' के नाम से जाना जाता है। आइए जानते हैं उन्होंने इस भाषण में क्या कहा था। –सं.

हमने नियति को मिलने का एक वचन दिया था, और अब समय आ गया है कि हम अपने वचन को निभाएं, पूरी तरह ना सही, लेकिन बहुत हद तक। आज रात बारह बजे, जब सारी दुनिया सो रही होगी, भारत जीवन और स्वतंत्रता की नई सुबह के साथ उठेगा। एक ऐसा क्षण, जो इतिहास में बहुत ही कम आता है, जब हम पुराने को छोड़ नए की तरफ जाते हैं, जब एक युग का अंत होता है, और जब वर्षों से शोषित एक देश की आत्मा अपनी बात कह सकती है। यह एक संयोग है कि इस पवित्र मौके पर हम समर्पण के साथ खुद को भारत और उसकी जनता की सेवा और उससे भी बढ़कर सारी मानवता की सेवा करने के लिए प्रतिज्ञा ले रहे हैं।

इतिहास के आरम्भ के साथ ही भारत ने अपनी अंतहीन खोज प्रारंभ की और न जाने कितनी ही सदियां इसकी भव्य सफलताओं और असफलताओं से भरी हुई हैं। चाहे अच्छा वक्त हो या बुरा, भारत ने कभी इस खोज से अपनी नजर नहीं हटाई और कभी भी अपने उन आदर्शों को नहीं भूला जिसने इसे शक्ति दी। आज हम दुर्भाग्य के एक युग का अंत कर रहे हैं और भारत पुनः खुद को खोज पा रहा है। आज हम जिस उपलब्धि का उत्सव मना रहे हैं, वह महज एक कदम है, नए अवसरों के खुलने का, इससे भी बड़ी विजय और उपलब्धियां हमारी प्रतीक्षा कर रही हैं। क्या हममें इतनी शक्ति और बुद्धिमत्ता है कि हम इस अवसर को समझें और भविष्य की चुनौतियों को स्वीकार करें?

भविष्य में हमें विश्राम करना या चैन से नहीं बैठना है बल्कि निरंतर प्रयास करना है ताकि हम जो वचन बार-बार दोहराते रहे हैं और जिसे हम आज भी दोहराएंगे उसे पूरा कर सकें। भारत की सेवा का अर्थ है लाखों-करोड़ों पीड़ित लोगों की सेवा करना। इसका मतलब है गरीबी और अज्ञानता को मिटाना, बीमारियों और अवसर की असमानता को मिटाना। हमारी पीढ़ी के सबसे महान व्यक्ति की यही महत्वाकांक्षा रही है कि हर एक आंख से आंसू मिट जाएं। शायद ये हमारे लिए संभव न हो पर जब तक लोगों की आंखों में आंसू हैं और वे पीड़ित हैं तब तक हमारा काम खत्म नहीं होगा।

हमें परिश्रम करना होगा, और कठिन परिश्रम करना होगा ताकि हम अपने सपनों को साकार कर सकें। वे सपने भारत के लिए हैं, पर साथ ही वे पूरे विश्व के लिए भी हैं, आज कोई खुद को बिलकुल अलग नहीं सोच सकता क्योंकि सभी राष्ट्र और लोग एक दूसरे से बड़ी समीपता से जुड़े हुए हैं। शांति को अविभाज्य कहा गया है, इसी तरह से स्वतंत्रता भी अविभाज्य है, समृद्धि भी और विनाश भी, अब इस दुनिया को छोटे-छोटे हिस्सों में नहीं बांटा जा सकता है। हमें स्वतंत्र भारत का महान निर्माण करना है जहां उसके सारे बच्चे रह सकें।

आज नियत समय आ गया है, एक ऐसा दिन जिसे नियति ने तय किया था – और एक बार फिर वर्षों के संघर्ष के बाद, भारत जागृत और स्वतंत्र खड़ा है। कुछ हद तक अभी भी हमारा भूत हमसे चिपका हुआ है, और हम अक्सर जो वचन लेते रहे हैं उसे निभाने से पहले बहुत कुछ करना है। पर फिर भी निर्णायक बिंदु अतीत हो चुका है, और हमारे लिए एक नया इतिहास आरम्भ हो चुका है, एक ऐसा इतिहास जिसे हम गढ़ेंगे और जिसके बारे में और लोग लिखेंगे।

ये हमारे लिए सौभाग्य का क्षण है, एक नए तारे का उदय हुआ है, पूरब में स्वतंत्रता का सितारा उगा है। एक नयी आशा का जन्म हुआ है, एक दूरदृष्टि अस्तित्व में आई है। काश ये तारा कभी अस्त न हो और ये आशा कभी धूमिल न हो! हम सदा इस स्वतंत्रता में आनंदित रहें।

भविष्य हमें बुला रहा है। हमें किधर जाना चाहिए और हमारे क्या प्रयास होने चाहिए, जिससे हम आम आदमी, किसानों और कामगारों के लिए स्वतंत्रता और अवसर ला सकें, हम गरीबी, अज्ञानता और बीमारियों से लड़ सकें, हम एक समृद्ध, लोकतांत्रिक और प्रगतिशील देश का निर्माण कर सकें, और हम ऐसी सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक संस्थाओं की स्थापना कर सकें जो हर एक आदमी-औरत के लिए जीवन की परिपूर्णता और न्याय सुनिश्चित कर सके?

हमे कठिन परिश्रम करना होगा। हम में से कोई भी तब तक चैन से नहीं बैठ सकता है जब तक हम अपने वचन को पूरी तरह निभा नहीं देते, जब तक हम भारत के सभी लोगों को उस गंतव्य तक नहीं पहुंचा देते जहां भाग्य उन्हें पहुंचाना चाहता है।

हम सभी एक महान देश के नागरिक हैं, जो तीव्र विकास की कगार पर है, और हमें उस उच्च स्तर को पाना होगा। हम सभी चाहे जिस धर्म के हों, समानरूप से भारत मां की संतान हैं, और हम सभी के बराबर अधिकार और दायित्व हैं। हम और संकीर्ण सोच को बढ़ावा नहीं दे सकते, क्योंकि कोई भी देश तब तक महान नहीं बन सकता जब तक उसके लोगों की सोच या कर्म संकीर्ण हैं।

विश्व के देशों और लोगों को शुभकामनाएं भेजिए और उनके साथ मिलकर शांति, स्वतंत्रता और लोकतंत्र को बढ़ावा देने की प्रतिज्ञा लीजिए। हम अपनी प्यारी मातृभूमि, प्राचीन, शाश्वत और निरंतर नवीन भारत को अपनी आस्था अर्पित करते हैं और एकजुट होकर नए सिरे से इसकी सेवा करते हैं। ❑

अध्यक्ष की कलम से

❑ महादेव विद्रोही

प्राचार्य डॉ. सोमनाथ रोडे का अमृत महोत्सव : महाराष्ट्र सर्वोदय मंडल के भूतपूर्व अध्यक्ष तथा सर्व सेवा संघ के ट्रस्टी प्राध्यापक सोमनाथ रोडे ने इस साल अपने जीवन के 75 वर्ष पूरे किये। इस अवसर पर दिनांक 23 जून 2019 को उनके मित्रों एवं विद्यार्थियों ने लातूर में अमृत महोत्सव का आयोजन किया था। कार्यक्रम के दो भाग थे—पहला, गांधीजी की 150वीं जयंती और दूसरा, अमृत महोत्सव। कार्यक्रम में महाराष्ट्र के अतिरिक्त देशभर से विशिष्ट लोगों ने भाग लिया। मुझे मुख्य अतिथि के रूप में आमंत्रित किया गया था। इस अवसर पर प्राध्यापक सोमनाथ रोडे द्वारा लिखित पुस्तक 'शोध एक नव्या दिशेचा', 'आनंदवन सेवचे रामायण', 'आकलन इतिहासाचे' एवं 'डॉ. सोमनाथ रोडे गौरव ग्रंथ' का विमोचन किया गया।

डॉ. रोडे का जन्म 24 नवम्बर 1943 को हुआ। 1969 में उन्होंने अहमदपुर स्थित महाविद्यालय में प्राध्यापक की नौकरी आरम्भ की। 1970 में उन्होंने लातूर स्थित महात्मा वसुवेश्वर महाविद्यालय में प्राध्यापक और प्राचार्य के रुप में काम किया। उन्होंने महाराष्ट्र में विविध विषयों पर एक हज़ार से अधिक व्याख्यान दिये हैं। प्राध्यापक रोडे, बाबा आमटे से बहुत नज़दीक से जुड़े रहे। उन्होंने 1967 से अबतक आनंदवन द्वारा आयोजित 52 शिविरों में अविरत भाग लिया। उन्होंने इतिहास से संबंधित अनेक पुस्तकें लिखी हैं।

मध्य प्रदेश गांधीजन सम्मेलन : दिनांक 25 जून 2019 को गांधी न्यास भोपाल (मध्य प्रदेश) द्वारा गांधीजन सम्मेलन का आयोजन किया गया। मैं इसमें मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित था। प्रदेश में संगठन को खड़ा करने के लिए कार्यकर्ताओं के साथ चर्चा हुई। न्यास के सचिव एकनाथ नामदेव ने मध्य प्रदेश में सर्वोदय मंडल को खड़ा करने में अपनी रुचि दिखायी है।

आपातकाल विरोधी दिवस : पूर्व मध्य रेलवे कर्मचारी यूनियन तथा बिहार पत्रकार संघ की ओर से दिनांक 26 जून 2019 को पटना में एक परिसंवाद का आयोजन किया गया। इसका विषय था 'भारत में लोकतंत्र कितना अक्षुण्ण' और

'मीडिया की भूमिका और उसकी चुनौतियां'। मुझे इस कार्यक्रम में विशेष वक्ता के रुप में आमंत्रित किया गया था। कार्यक्रम में वक्ताओं ने इस बात पर चिन्ता और दुख व्यक्त किया कि देश में अघोषित आपातकाल की स्थिति है। सरकार से भिन्न राय रखने वाली सभी आवाजों को येन केन प्रकारेण बंद किया जा रहा है।

राष्ट्र सेवा दल के साथ : अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के लिये लड़ने वाले गणेश देवी राष्ट्र सेवा दल के नये अध्यक्ष चुने गये हैं। वे चाहते हैं कि समान विचारधारा वाले सभी संगठन फासीवादी शक्तियों का मिलकर मुकाबला करें। इस दृष्टि से उन्होंने दिनांक 28 जून 2019 को पुणे में विभिन्न संगठनों के प्रतिनिधियों की एक बैठक आयोजित की थी, जिसमें जी.जी.परीख, बाबा आढ़ाव, पन्नालाल सुराणा, विद्या बहन, अनवर राजन, रजिया पटेल, विजया चव्हाण सहित समाजवादी प्रवाह के विभिन्न संगठनों के प्रतिनिधि शामिल थे। सर्व सेवा संघ की ओर से मैं, शेख हुसैन एवं जयवंत मठकर उपस्थित थे। हमने इस अभियान में सर्व सेवा संघ की ओर से हर संभव सहयोग का आश्वासन दिया है।

जनतंत्र समाज सम्मेलन : दिनांक 29-30 जून 2019 को दिल्ली में देश की विषम परिस्थिति के बारे में एक सम्मेलन आयोजित किया गया। सम्मेलन का मुख्य विषय था 'जनतंत्र की चुनौतियां एवं नागरिक समाज की भूमिका'। इसके अतिरिक्त चुनाव में धन का बढ़ता उपयोग, चुनाव सुधार एवं इलेक्ट्रोरल बॉन्ड लोकतंत्र एवं मीडिया जैसे महत्वपूर्ण विषयों पर भी चर्चा हुई। सर्व सेवा संघ की ओर से मैं स्वयं इसमें उपस्थित था। ज्ञातव्य है कि लोकनायक जयप्रकाश नारायण जनतंत्र समाज के संस्थापक अध्यक्ष थे।

सर्वोदय जगत के पाठक : कार्यसमिति की बैठक में मैंने लोगों से सर्वोदय जगत का ग्राहक बनाने की अपील की। इस अपील पर बैठक में ही 13 नये ग्राहक बने। उत्तर प्रदेश सर्वोदय मंडल ने 2 अक्टूबर तक 50 नये ग्राहक बनाने का संकल्प लिया है। ❑

जेपी आंदोलन के सक्रिय साथी विश्वनाथ बागी नहीं रहे

जेपी आंदोलन के प्रमुख स्तंभ एवं समाजवादी चिंतक विश्वनाथ बागी का 12 जुलाई को सुबह हृदय गति रुक जाने के कारण निधन हो गया। वे सुबह आठ बजे धनबाद रेलवे स्टेशन पर पटना इंटरसिटी एक्सप्रेस पर सवार होने जा रहे थे। उन्हें हार्ट अटैक हुआ। उन्हें रेलवे हॉस्पीटल धनबाद लाया गया, जहां चिकित्सकों ने उन्हें मृत घोषित कर दिया। उनके शव का अंतिम संस्कार 13 जुलाई को दामोदर नदी के तेलमच्चो घाट पर किया गया। उनकी इकलौती पुत्री आकृति बिम्मी ने पार्थिव शरीर को मुखाग्नि दी।

विश्वनाथ बागी जेपी आंदोलन में एक बार कूदे तो पीछे लौट कर नहीं देखा। छात्र युवा संघर्ष वाहिनी के बैनर तले वर्ष 77 से वर्ष 80 तक बोधगया में चले भूमि आंदोलन में इन्हें प्रांतीय संयोजक की जिम्मेदारी सौंपी गई थी। इस भूमि आंदोलन के पश्चात 10 हजार एकड़ भूमि का वितरण भूमिहीन लोगों के बीच किया गया था।

लोकल सेल में कोयला लोडिंग करने वाले असंगठित मजदूरों को बागी के ही आंदोलन के बाद पहली बार जिला प्रशासन की ओर से पहचान पत्र बनाकर दिया गया था। वर्ष 1990 में धनबाद जिले में साक्षरता कार्यक्रम के लिए पहली बार उन्हें संचालन की जिम्मेदारी भी सौंपी गई थी।

सर्व सेवा संघ दिवंगत के सम्मान में हार्दिक श्रद्धांजलि व्यक्त करता है।

लोक-विमर्श

भूदान की जमीन भूमिहीन को मिले!

भूदान आंदोलन के बाद विनोबाजी ने भूदान यज्ञ मंडल के निर्माण के अधिकार 'सर्व सेवा संघ' को दिये थे। उसी के मुताबिक काम भी चल रहा है लेकिन बहुत अफसोस के साथ कहना पड़ रहा है कि देश में कई जगह भूदान जमीन बंटवारे के काम में भ्रष्टाचार हुआ है। भूदान समितियों में ईमानदारी की कमी महसूस हो रही है। विनोबा के पश्चात् भूदान आंदोलन में कई नये कार्यकर्ता आये, जिन्होंने भूदान के महत्त्व को समझा नहीं। यह वस्तुस्थिति है। भूदान यज्ञ समिति के निर्माण का अधिकार जब सर्व सेवा संघ को है, तब उसके कार्य पर नियंत्रण करने का अधिकार भी सर्व सेवा संघ को ही होना चाहिए, ऐसा मेरा मानना है।

मैं एक सामान्य सर्वोदय कार्यकर्ता हूं। मैंने 1942 के आंदोलन में 9 साल स्कूल छोड़कर भूमिगत स्वतंत्रता संग्राम में हिस्सा लिया था। आजादी के बाद कांग्रेस कार्यकर्ता के तौर पर काम किया और 1949 में जब जेपी ने कांग्रेस छोड़ी तब हम समाजवादी पक्ष में भी रहे।

भूदान आंदोलन शुरू होने पर भूदान पदयात्रा की। अकोला जिले में भूदान प्रचार में लग गया। मैंने भी 2 एकड़ जमीन भूदान में दी। बाद में विनोबाजी ने छठवां हिस्सा मांगा तब हमारे गांव में राष्ट्रसंत तुकड़ो जी महाराज को भूदान प्रचार के लिए आमंत्रित किया गया, उनकी सभा में मैंने अपनी जमीन का छठवां हिस्सा मानकर फिर 3 एकड़ जमीन दान में दी। इस प्रकार मैंने कुल मिलाकर 5 एकड़ जमीन भूदान में दी। मैंने यह जमीन दान का कार्य विचारपूर्वक, खूब समझकर किया। बाद में दो भूमिहीनों में वह जमीन बांट दी गयी। वे अच्छी काश्तकारी करने लगे। सुखी, समाधानी दिखे, मुझे आनंद हुआ। 10 साल पहले मुझे उस गांव में जाने का मौका मिला। उस खेत में से सड़क भी गयी है। उस खेती में मुझे बगीचा देखने को मिला। मेरी जमीन जिसे मिली थी, उस आदमी से मिलने का भी मौका मिला। 3 एकड़ जमीन जिसको मिली थी, वह तो स्वर्गवासी हो गया। उसके वारिसों ने खेत बेच डाला। जिसने जमीन खरीदी, उसने उसमें पपई का बाग लगाया, ऐसा मालूम हुआ।

मैंने यह खबर भूदान यज्ञ मंडल को दी और वह जमीन भूमिहीन को देने की विनती की। भूदान यज्ञ मंडल ने मेरी अर्जी पर विचार तक नहीं किया। मैंने सर्व सेवा संघ की तत्कालीन अध्यक्ष राधा भट्ट को भी अर्जी देकर विषय समझाया। उन्होंने भूदान यज्ञ मंडल को पत्र लिखकर मेरी अर्जी पर विचार करने का आदेश दिया। पर भूदान बोर्ड ने कुछ किया नहीं।

मेरी सर्व सेवा संघ से भी नम्र विनती है कि दान दी हुई 3 एकड़ जमीन बड़े किसान से वापस लेकर किसी भूमिहीन को बांटी जाय ताकि एक भूमिहीन परिवार सुखी हो।

इस अर्जी का यह उद्देश्य बिलकुल नहीं है कि मुझे जमीन वापस चाहिए। जमीन भूमिहीन को ही बांटी जाय। भूमिहीनों की मदद करने के लिए ही भूदान मंडल बनाये गये थे, इसलिए भूदान की जमीन भूमिहीनों को ही मिलनी चाहिए।

भूमिहीनों को पट्टे देकर भूदान बोर्ड में जो रकम जमा होती है वह निधि भी आदाताओं के विकास के लिए उन्हीं को मिलनी चाहिए। देखा जाता है कि भूदान की जमीन भूमिहीनों को देने के बजाय उसका दुरुपयोग हो रहा है। क्या सर्व सेवा संघ इसका नियंत्रण नहीं कर सकता?

मुझे विश्वास है कि इस समस्या को आप हल कर सकेंगे। मेरी आयु 90 साल की है। मेरे दानपत्र का सुयोग्य विनियोग हुआ है, ऐसा देखने को मिले, ऐसी मेरी तीव्र इच्छा है।

–रामसिंह राजपूत
एक सर्वोदय कार्यकर्ता

सबै भूमि गोपाल की

हमारे पास जितनी भी जमीन, सम्पत्ति, बुद्धि और शक्ति है—वह सब हमें आम जनता के लिए प्राप्त हुई है। ये हमारी निजी सम्पत्तियां नहीं, दैवी सम्पत्तियां हैं, परमेश्वर की देनें हैं। उनका विनियोग जनता की सेवा में करना चाहिए। जिस तरह हम कुटुम्ब में मिल-जुलकर काम करते हैं, वैसे ही हमें सृष्टि की उपासना करनी है। अपने सुख-दुःख में दूसरों को हिस्सा देना है।...हमें जो सारी समाज-रचना बदलनी है, उसी का यह श्रीगणेश है। सबका मन समान हो, सबका हृदय समान हो, सबका मंत्र समान हो। इस तरह साम्ययोग-शिक्षा, जो सब महापुरुषों ने हमें दी थी, उसकी प्राप्ति नहीं, साधना करनी है और उसके लिए पहला कदम यह भूदान-यज्ञ है, क्योंकि भूमि सब प्रकार की सम्पत्ति के उत्पादन का सबसे बड़ा साधन है। उसका सबके काम के लिए, सम्मिलित और संयुक्त उपयोग होना चाहिए—उसमें किसी को कम या अधिक अधिकार नहीं होना चाहिए। **–विनोबा**

सर्व सेवा संघ राष्ट्रीय कार्यकारिणी की बैठक सेवाग्राम में सम्पन्न

गांधी के हत्यारे के महिमामंडन की भर्त्सना : सेवाग्राम में सर्व सेवा संघ (अ. भा. सर्वोदय मंडल) की राष्ट्रीय कार्यकारिणी की बैठक 9 जुलाई को अध्यक्ष महादेव विद्रोही की अध्यक्षता में शुरू हुई. बैठक में गुजरात, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, दिल्ली, बिहार, झारखंड, पश्चिम बंगाल, महाराष्ट्र, केरल, ओड़िशा आदि राज्यों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया. बैठक में सर्वसम्मति से भोपाल, सूरत आदि स्थानों पर गांधी के हत्यारे के महिमामंडन की घटनाओं की भर्त्सना की गयी। मांग की गयी कि हत्या के समर्थक इन लोगों के खिलाफ आतंकवादी धारा के अंतर्गत कारवाई करनी चाहिए. जिस व्यक्ति को न्यायालय में हत्या के अपराध में फांसी की सजा दी जा चुकी है, उसका महिमामंडन करना न्यायालय का अपमान है.

मधुबाला मंडल को गैर-कानूनी ढंग से गिरफ्तार करने वाले पुलिस अधिकारी दंडित हों : पिछली 27 जून को असम के कोकराझार में मधुबाला मंडल नाम की एक 59 वर्षीय महिला को 3 वर्षों तक डिटेंशन कैंप में रखने के बाद निर्दोष पाकर छोड़ा गया. सर्व सेवा संघ निर्दोष नागरिकों पर इस तरह की घटना को सरकारी आतंकवाद का नमूना मानता है तथा सरकार से पीड़ितों को एक करोड़ रुपये का मुआवजा देने तथा मधुबाला मंडल को झूठे आरोप में गिरफ्तार करने वाले पुलिस अधिकारियों को गिरफ्तार करके उन्हें कड़ी सजा देने की मांग करता है।

राष्ट्रीय नागरिकता पंजी : नेशनल रजिस्टर ऑफ़ सिटिजन्स के नाम पर लाखों नागरिकों को परेशान करने तथा सरकारी अधिकारियों द्वारा उनसे पैसे मांगने की घटनाओं की भी सर्व सेवा संघ निंदा करता है.

लोकसभा के 100 से अधिक संदिग्ध परिणामों को रद्द करने की मांग : आम चुनावों के दौरान देश के 100 से अधिक लोकसभा क्षेत्रों में हुए कुल मतदान से इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन में अधिक मत पाये जाने तथा लाखों मशीनों के गायब हो जाने पर सर्व सेवा संघ गहरी चिंता व्यक्त करता है. चुनाव आयोग से हम मांग करते है कि उन सभी लोकसभा क्षेत्रों के चुनाव रद्द कर वहां नए सिरे से चुनाव कराने चाहिए, जहां पड़े हुए वोटों से अधिक वोट मिले हैं.

सामाजिक कार्यकर्ताओं के खिलाफ मुकदमे वापस लेने की मांग : वर्धा में एक मंदिर में एक दलित बच्चे के साथ जो अत्याचार हुआ, हम उसकी निंदा करते हैं तथा दोषी व्यक्तियों के खिलाफ कारवाई की मांग करते है. झारखंड में सरकार की आलोचना करने वाले 20 सामाजिक कार्यकर्ताओं के खिलाफ देशद्रोह के मुकदमे को हम लोकतंत्र की हत्या जैसा मानते हैं. हमारी मांग है कि इन सभी कार्यकर्ताओं पर से तुरन्त ये मुक़दमे वापस लिये जायें.

आज देश में धर्म के नाम पर वैमनष्य के बीज बोये जा रहे हैं. यह किसी भी लोकतान्त्रिक राष्ट्र के लिये खतरे की घंटी है. हम नागरिकों से अपील करते हैं कि इस तरह की विभाजक शक्तियों से दूर रहें।

महाराष्ट्र सरकार द्वारा अवैध रूप से विदर्भ भूदान यज्ञ मंडल के गठन को न्यायालय में चुनौती : कार्यकारिणी समिति की बैठक में महाराष्ट्र सरकार द्वारा अवैध रूप से विदर्भ भूदान यज्ञ मंडल के गठन को न्यायालय में चुनौती देने का निर्णय लिया गया. ज्ञातव्य है कि मध्य प्रदेश भूदान यज्ञ अधिनियम 1953 की धारा 33 ए के अनुसार सर्व सेवा संघ द्वारा बोर्ड के पदाधिकारियों एवं सदस्यों को नामित करने का प्रावधान है. पर सरकार ने एक ऐसी संस्था द्वारा नामित व्यक्तियों की समिति बनायी है, जो वास्तव में है ही नहीं. महाराष्ट्र सरकार ने अभी तक सर्व सेवा संघ द्वारा नामित व्यक्तियों को ही विदर्भ भूदान यज्ञ मंडल में लिया है. यह पहला मौका है, जब कानून का उल्लंघन हुआ है.

विनोबा की 125वीं जयंती : बैठक में अध्यक्ष महादेव विद्रोही ने बताया कि 11 सितम्बर 2019 को भूदान आन्दोलन के प्रणेता आचार्य विनोबा भावे की 125वीं जयंती शुरू हो रही है. इस उपलक्ष्य में 11 सितम्बर को एक राष्ट्रीय सम्मेलन आयोजित किया जायेगा. देश के अलग-अलग भागों में पदयात्राएं आयोजित की जायेंगी तथा आचार्य विनोबा के जीवन एवं कार्यों पर एक पुस्तक का प्रकाशन किया जायेगा. कार्यसमिति ने पूर्व आईपीएस अधिकारी संजीव भट्ट को गलत ढंग से फंसाये जाने पर अपनी चिंता व्यक्त करते हुए इस पूरे मामले की जांच हेतु एक न्यायिक आयोग के गठन की मांग भी की है.

महात्मा गांधी की 150वीं जयंती 2 अक्टूबर 2020 तक मनाने का निर्णय : राष्ट्रपिता महात्मा गांधी एवं माता कस्तूरबा की 150वीं जयंती 2 अक्टूबर 2020 तक मनाने का निर्णय किया गया है. इसके अंतर्गत सर्व सेवा संघ देश के विभिन्न भागों में युवाओं एवं महिलाओं के शिविर आयोजित कर उन्हें गांधी मार्ग में दीक्षित करेगा. साथ ही विद्यालयों में बापू के जीवन एवं कार्यों पर निबंध प्रतियोगिता, चित्र प्रतियोगिता, वक्तृत्व स्पर्धा आदि आयोजित किये जायेंगे. **–स. ज. प्रतिनिधि**

'Sarvodaya Jagat' Hindi Fortnightly
Registered under RNI No. 35495/78, Postal Registration No. VSI-(E) 04, Valid upto 31 December 2020
Issued by S.S.P.O. Varanasi (East Division)

कविताएं

न चाहूं मान दुनिया में

–रामप्रसाद बिस्मिल

न चाहूं मान दुनिया में,
न चाहूं स्वर्ग को जाना
मुझे वर दे यही माता
रहूं भारत पे दीवाना

करूं मैं कौम की सेवा
पड़े चाहे करोड़ों दुख
अगर फिर जन्म लूं आकर
तो भारत में ही हो आना

लगा रहे प्रेम हिन्दी में,
पढ़ूं हिन्दी लिखूं हिन्दी
चलन हिन्दी चलूं,
हिन्दी पहरना, ओढ़ना खाना

भवन में रोशनी मेरे रहे
हिन्दी चिरागों की
स्वदेशी ही रहे बाजा,
बजाना, राग का गाना

लगें इस देश के ही अर्थ
मेरे धर्म, विद्या, धन
करूं मैं प्राण तक अर्पण
यही प्रण सत्य है ठाना

नहीं कुछ गैर-मुमकिन है
जो चाहो दिल से 'बिस्मिल' तुम
उठा लो देश हाथों पर
न समझो अपना बेगाना।

कस ली है कमर अब तो, कुछ करके दिखायेंगे

–अशफाक उल्ला खाँ

कस ली है कमर अब तो, कुछ करके दिखायेंगे।
आजाद ही हो लेंगे, या सर ही कटा देंगे।
हटने के नहीं पीछे, डरकर कभी जुल्मों से,
तुम हाथ उठाओगे, हम पैर बढ़ा देंगे।
बेशस्त्र नहीं हैं हम, बल है हमें चरखे का,
चरखे से जमीं को हम, ता चर्ख गुंजा देंगे।
परवा नहीं कुछ दम की, गम की नहीं, मातम की,
है जान हथेली पर, एक दम में गंवा देंगे।
उफ तक भी जुबां से हम हरगिज न निकालेंगे,
तलवार उठाओ तुम, हम सर को झुका देंगे।
दिलवाओ हमें फांसी, ऐलान से कहते हैं,
खूं से ही शहीदों के, हम फौज बना देंगे।
मुसाफिर जो अंडमान के, तूने बनाये, जालिम,
आजाद ही होने पर, हम उनको बुला लेंगे।

हुब्ब-ए-क़ौमी

–ब्रजनारायण चकबस्त

हुब्ब-ए-क़ौमी का ज़बाँ पर,
इन दिनों अफ्साना है।
बादा-ए-उल्फ़त से पुर दिल का
मिरे पैमाना है।
जिस जगह देखो, मोहब्बत का
वहां अफ्साना है।
इश्क़ में अपने वतन के,
हर बशर दीवाना है।
जब कि ये आगाज है, अंजाम का
क्या पूछना
बादा-ए-उल्फत का ये तो
पहला ही पैमाना है।
है जो रौशन बज्म में
कौमी तरक्की का चराग
दिल फिदा हर इक का
उस पर सूरत-ए-परवाना है।
मुझसे इस हमदर्दी-ओ-उल्फत का
क्या होवे बयाँ
जो है वो कौमी तरक्की के लिए
दीवाना है।
लुत्फ यकताई में जो है,
वो दुई में है कहां
बर-खिलाफ इसके जो हो समझो कि
वो दीवाना है।
नख्ल-ए-उल्फत जिनकी कोशिश से
उगा है कौम में,
काबिल-ए-तारीफ उनकी
हिम्मत-ए-मर्दाना है।
है गुल-ए-मक्सूद से पुर
गुलशन-ए-कश्मीर आज,
दुश्मनी ना-इत्तिफाकी
सब्जा-ए-बेगाना है।
दुर-फिशाँ है हर जबाँ
हुब्ब-ए-वतन के वस्फ में,
जोश-जन हर सम्त
बहर-ए-हिम्मत-ए-मर्दाना है।
ये मोहब्बत की फजा
कायम हुई है आप से,
आप का लाजिम तह-ए-दिल से
हमें शुक्राना है।
हर बशर को है भरोसा
आप की इमदाद पर,
आपकी हमदर्दियों का
दूर-दूर अफ्साना है।
जम्अ हैं कौमी तरक्की के लिए
अर्बाब-ए-कौम,
रश्क-ए-फिरदौस उनके कदमों से
ये शादी-खाना है

स्वतंत्रता दिवस

–हरिबंश राय बच्चन

आज से आजाद अपना देश फिर से!

ध्यान बापू का प्रथम मैंने किया है,
क्योंकि मुर्दों में उन्होंने भर दिया है
नव्य जीवन का नया उन्मेष फिर से!
आज से आजाद अपना देश फिर से!

दासता की रात में जो खो गये थे,
भूल अपना पंथ, अपने को गये थे,
वे लगे पहचानने निज वेश फिर से!
आज से आजाद अपना देश फिर से!

स्वप्न जो लेकर चले उतरा अधूरा,
एक दिन होगा, मुझे विश्वास, पूरा,
शेष से मिल जायेगा अवशेष फिर से!
आज से आजाद अपना देश फिर से!

देश तो क्या, एक दुनिया चाहते हम,
आज बंट-बंट कर मनुज की जाति निर्मम,
विश्व हमसे ले नया संदेश फिर से!
आज से आजाद अपना देश फिर से!

सर्व सेवा संघ (स्वत्वाधिकारी) के लिए महामंत्री, शेख हुसैन द्वारा सर्व सेवा संघ परिसर, राजघाट, वाराणसी (उ.प्र.) 221001 से प्रकाशित तथा महावीर प्रेस, भेलूपुर, वाराणसी से मुद्रित। संपादक : बिमल कुमार।